संपर्क भाषा भारती

साहित्य-समाज को समर्पित राष्ट्रीय मासिकी, अप्रैल—2022, RNI-50756

रवीन्द्र कान्त त्यागी-अभागी बड़भागी

महेंद्र महर्षि-फैमिली डॉक्टर

जया रावत-तेरा वजूद

अशोक जैन-सोच

वंदना अरिमर्दन-किस्सा दिल्ली का

सोनम लववंशी -असंवेदनशील समाज

इस अंक के सम्मानित रचनाकार : डॉ डॉली शर्मा, मंजुल भटनागर, डॉ सरला सिंह स्निग्धा, डॉ विभा रंजन, तृप्ति मिश्रा, यशपाल सिंह, डॉ रामप्रवेश रजक, शिवानंद सहयोगी, डॉ केवल कृष्ण पाठक, लाल देवेंद्र कुमार श्रीवास्तव, अशोक तिवारी, रामानुज अनुज, राजेश सिंह, समीर ललितचंद्र उपाध्याय, सूर्यदीप कुशवाहा, रविकांत उपाध्याय, व्यग्र पाण्डेय,

सहयोग 60/-

अनुक्रमणिका अप्रैल -2022

क्रम सं:	शीर्षक :	लेखक :	पृष्ठ संख्या
1.	महिलाओं के प्रति असंवेदनशील समाज	सोनम लववंशी	3-4
2.	कविता	डॉ डॉली शर्मा	4
3.	फैमिली डॉक्टर	महेंद्र महर्षि	5-6
4.	कविता	मंजुल भटनागर	6
5.	सोच (लघुकथा)	अशोक जैन	7
6.	कविता	यशपाल सिंह यश	8
7.	कविता	डॉ रामप्रवेश रजक	8
8.	कविता	यशपाल सिंह यश	9
9.	कविता	डॉ सरला सिंह स्निग्धा	9
10.	किस्सा दिल्ली का	वंदना अरिमर्दन	10-12
11.	कविता	शिवानंद सहयोगी	12
12.	कविता	लाल देवेंद्र कुमार श्रीवास्तव	13
13.	कविता	डॉ केवल कृष्ण पाठक	13
14.	अभागी-बड़भागी (कहानी)	रवीन्द्र कान्त त्यागी	14-18
15.	कविता	अशोक तिवारी	18
16.	कविता	रामानुज अनुज	19
17.	गंदी लड़की (कहानी)	वंदना अरिमर्दन	20-22
18.	राजेंद्र स्वर्णकार पर जर्मनी में बनेगी डॉक्यूमेंटरी		23-24
19.	कविता	राजेश सिंह	24
20.	कविता	समीर उपाध्याय	25
21.	बिना राज-पाट का राजा (कहानी)	वंदना अरिमर्दन	26-28
22.	कविता	जया रावत	28
23.	कविता	जया रावत	29
24.	कविता	तृप्ति मिश्रा	30
25.	कविता	सूर्यदीप कुशवाहा	30
26.	कविता	समीर उपाध्याय	30
27.	कविता	रवि कान्त उपाध्याय	31
28.	कविता	व्यग्र पाण्डेय	31
29.	कविता	डॉ विभा रंजन कनक	31
30.	कविता	डॉ विभा रंजन	43
31.	कविता	शगुफ्ता रहमान	43
32.	कविता	जया रावत	44
33.	कविता	वीरेंद्र कौशल	44

महिलाओं के प्रति असंवेदनशील समाज

सोनम लववंशी

कार्ल मार्क्स ने धर्म को अफ़ीम कहा था। वर्तमान दौर में सोशल मीडिया 'अफ़ीम' का काम कर रही है। ऐसे में आज भले हमारे सम्पर्क का दायरा बढ़ गया है, लेकिन दिलों में नफ़रत की खाई पनपती जा रही है और कहीं न कहीं सोशल मीडिया नफ़रत फैलाने का जरिया बनता जा रहा हैं। इतना ही नहीं यहां कई बार किसी अपराध की प्रकृति ऐसी होती है, जिसके जिम्मेदार लोगों को तो कानून के कठघरे में लाया जा सकता है, लेकिन उससे सामाजिकता की व्यापक छवि को जो नुकसान पहुंचता है, उसकी भरपाई आसान नहीं होती। इंटरनेट के विस्तार के साथ-साथ इसकी उपयोगिता से इंकार नहीं किया जा सकता, लेकिन इसके समांतर साइबर दुरुपयोग के जितने स्तर सामने आ रहे हैं, वे अपराधों का एक नया संजाल खड़ा कर रहे हैं। ऐसे में देखें तो विज्ञान ने तरक़्क़ी तो बहुत कर ली है पर विज्ञान वरदान साबित होगा या अभिशाप? यह हमें ही तय करना है। विडंबना देखिए जिस तकनीकी का इजात मानव की भलाई के लिए किया गया था आज वही नफ़रत का ज़रिया बन गया है। बाजारवाद के इस दौर में हर चीज़ बिकाऊ हो गई है और शायद इसी मानसिकता ने 'बुल्ली बाई' जैसे ऐप को इज़ात कर लिया, लेकिन हमारी सहनशीलता देखिए कि इस अनैतिक अपराध पर भी हम खामोश बैठे है। हमारी सारी संवेदनाएं मर गई है। हमे तो बस धर्म के नाम पर राजनीति करनी है। वर्तमान दौर में इंसानियत को भी धर्म के आधार पर बांटने का राजनीतिक खेल खेला जा रहा है। पर हमें इससे भला कहाँ फर्क पड़ने वाला है? हमें तो धर्म के नाम पर राजनीति करने की आदत सी हो गई है। इसीलिए तो अब विरोध भी धर्म देखकर किया जाने लगा है। पर क्या इंसानियत धर्म से बढ़कर हो गई है? हम तो वसुधैव कुटुम्बकम की परंपरा को मानने वाले लोग है जहां हर जीव पर दया की जाती है। फिर कैसे किसी धर्म विशेष की महिलाओं पर अन्याय होता देख हमारा सभ्य समाज अंधा हो गया है। कहां गई वे महिलाएं जो आधी आबादी का प्रतिनिधित्व करने की बड़ी बड़ी ढींगे हांकती है। जो विपक्ष बिना मुद्दे के भी शोर मचाते नहीं थकता था वह क्यों खामशो हो गया है? हर छोटी बड़ी बात में जो न्यायालय स्वयं संज्ञान ले लेता है आज वह भी मानो अपनी आंखों पर पट्टी बांध रहा हो। सवाल कई है पर सभी की जुबां मौन है और कई बार इसी मौन को 'स्वीकृति' का प्रतीक मान लिया जाता है। ऐसे में इन मुद्दों पर मुखर होने की जरूरत है और यह समझने की आवश्यकता कि आख़िर क्यों पढ़े-लिखें युवा भी ऐसे कामों में संलिप्त हो रहें हैं। वैसे देखा जाए तो यह खामोशी महिलाओं के लिए सबसे बड़ा अभिशाप बन गई है। जुर्म करना अपराध है

लेकिन जुर्म होते देख कर खामोश हो जाना भी बड़ा अपराध है।

कल्पना कीजिये कि एक महिला पर क्या बीती होगी जब नए वर्ष की सुबह में उस महिला ने खुद को नीलामी की वस्तु के रूप में देखा होगा। जहां उसकी बोली लगाई जा रही है, उस पर गंदे गंदे कमेंट किये जा रहे है।सोशल मीडिया पर उसकी क़ीमत तय की जा रही है। यह कोई कल्पना नहीं बल्कि वर्तमान दौर की सच्चाई है। जिसमें 'बुल्ली बाई' नामक ऐप के द्वारा 100 से अधिक मुस्लिम महिलाओं की तस्वीरों को नीलामी के लिए डाल दिया गया। उनकी बोली लगाई जा रही थी। इस ऐप में अभिनेत्री शबाना आज़मी से लेकर उच्च न्यायालय के न्यायधीश की पत्नी के साथ ही कई जानी मानी पत्रकार और राजनेता की तस्वीर भी शामिल थी। ताजुब की बात है कि पिछले छह महीने में यह दूसरी बार है जब इस तरह की घटना को अंजाम दिया गया है। इससे पहले 'सुल्ली डील' में भी इसी तरह महिलाओ को टारगेट किया गया था। वहीं अब इसे महज संयोग कहें या साज़िश सवाल तो यह उठता है कि यह ऐप तब लाया गया जब पंजाब, उत्तरप्रदेश व उत्तराखंड जैसे राज्यों में चुनाव का माहौल है। इस बात से भी इंकार नहीं किया जा सकता कि कहीं चुनाव का माहौल बिगाड़ने की यह साज़िश तो नहीं? क्योंकि सुल्ली डील को भी तभी लांच किया गया था जब पश्चिम बंगाल में चुनाव चरम पर था।

वहीं आंकड़ों के दृष्टिकोण से जब हम सोशल मीडिया यानी इंटरनेट और महिलाओं को देखते हैं। फिर भारतीय दूरसंचार नियामक प्राधिकरण (ट्राई) के मुताबिक मार्च 2021 के अंत तक भारत में लगभग 82.5 करोड़ इंटरनेट यूजर थे। उनमें से अधिकांश वास्तविक हैं, जिनमें शरारती तत्वों की संख्या बहुत कम है। लेकिन ऐसे शरारती तत्वों में राष्ट्र, उसकी राजनीति, अर्थव्यवस्था और नागरिकों के व्यक्तिगत और व्यावसायिक जीवन में तबाही मचाने की घातक क्षमता होती है। इतना ही नहीं ये सामाजिक ताने-बाने को ध्वस्त करने के लिए दबाव डाल सकते हैं और ऐसा ही कुछ ओपन-सोर्स ऐप बुल्ली बाई में भी देखा जा सकता है, जिसे "मुस्लिम महिलाओं की नीलामी" के लिए वेब प्लेटफॉर्म गिटहब पर होस्ट किया गया। इतना ही नहीं यह हमारे समाज और व्यवस्था की कड़वी सच्चाई है कि साइबर ब्लैकमेलिंग, इंटरनेट पर परेशान करना और डराना-धमकाना एक बहुत बड़ा मुद्दा है, जिससे महिलाओं और उनके परिवारों को काफी तनाव होता है और अब ये बातें सिर्फ महानगरों तक सीमित नहीं है या किसी विशेष जाति या समुदाय के लिए विशिष्ट भी नहीं। एनसीआरबी के आंकड़ों की ही बात करें तो

2020 के दौरान भारत में कुल साइबर अपराध की संख्या 50,035 थी और विशेष रूप से महिलाओं के खिलाफ अपराध केवल 10,405 थे। मालूम हो कि ये आंकड़े जमीनी हकीकत का एक अंश मात्र हैं और कई बार महिलाएं समाज में बदनामी के डर से भी शिकायत नहीं करती हैं, क्योंकि मर्दवादी भारतीय समाज में पीड़ित महिलाओं पर ही इल्जाम मढ़ दिया जाता है।

इसके अलावा देखें तो इस बार के बुल्ली बाई ऐप ने एक बार फिर यह साबित कर दिया है कि अपराध की कोई उम्र नहीं होती और अपराध करने वाले की कोई जाति नहीं। इस ऐप में भी जिस तरह से 18-21 साल के युवा विद्यार्थियों के नाम सामने आ रहें हैं। वह यह सोचने पर मजबूर करते हैं कि आख़िर हमारे देश के नौजवान किस राह पर बढ़ रहे हैं और इसके पीछे कारण क्या? इसकी तह तक जाना आज के वक्त की जरूरत है। आख़िर कोई पढा-लिखा युवा दिमागी रूप से जहरीला बन रहा तो उसके लिए जिम्मेदार धर्म है या व्यवस्था? इसकी स्पष्ट रूपरेखा भी अब तय होनी चाहिए, क्योंकि यूं ही कोई रास्ता तो भटकता नहीं और हां अगर हम यह मानकर इस बार भी बैठ गए कि अभी बोली तो मुस्लिम महिलाओं की लगी है हमें क्या? तो यह एक जिम्मेदार समाज का सबसे बड़ा नकारापन होगा क्योंकि ऐसी परिस्थियां धर्म और मजहब नहीं देखती। वहीं इस मामले में एक पहलू यह है कि किसी ऐप के जरिए महिलाओं को अपमानित करने जैसे अपराधों के पीछे जो प्रवृत्ति काम करती है, वह एक जटिल समस्या है और यह समझना मुश्किल नहीं है कि समुदाय विशेष की महिलाओं को निशाना बना कर उन्हें अपमानित करने, उनका भयादोहन करने के पीछे मुख्य रूप से सांप्रदायिक नफरत की भावना काम करती है। इससे एक पूरे समुदाय और खासकर महिलाओं के भीतर अपनी स्थिति को लेकर कैसी भावना पैदा होती होगी, इसका सहज अंदाजा लगाया जा सकता है। ऐसी हरकतों से चौतरफा नुकसान के सिवा और क्या हासिल होगा? यह हम और आप सभी समझ सकते हैं और ऐसे अपराध में सच यह भी है कि इस तरह का अपराध करने वाले लोग न्यूनतम मानवीय संवेदनाओं से भी दूर होते हैं और प्रथम दृष्टया इनके निशाने पर किसी खास समुदाय की महिलाएं हो सकती हैं, लेकिन आखिरकार ये सभी महिलाओं के खिलाफ कुंठा से भरे होते हैं। साइबर संसार के विस्तृत होते दायरे में ऐसे अपराधियों की गतिविधियों पर तत्काल लगाम नहीं लगाई गई तो आने वाले वक्त में डिजिटल दुनिया को लेकर एक खास तरह का असुरक्षाबोध जोर पकड़ेगा।

पसंद

मुझे किताबें पढ़ना पसंद है।
उन्हें फिल्म देखना।
किताब महंगी होती है,
और उस पर वह
नाचती गाती भी तो नहीं
इसलिए हम अक्सर
सिनेमा देख आते हैं।
साथ साथ कोई
मधुर गीत गुनगुनाते हैं।

मुझे सूर्योदय पसंद है।
उन्हें सूर्यास्त।
दिनभर अथक परिश्रम से
वह उठ नहीं पाते हैं
इसलिए हम अक्सर
सूर्यास्त के समय ही
बैठते हैं ,बतियाते हैं ।
मुझे नदी किनारे बैठना पसंद है।
उन्हें बगीचे में टहलना।
टहलने के वह,
सौ फायदे गिनवाते हैं
इसलिए हम अक्सर
बगीचे में टहल आते हैं।

मुझे खीर पसंद है।
उन्हें हलवा।
मतलब तो मिठास से है जी,
इसलिए हम अक्सर ही
हलवा बना लेते हैं।
अपने जीवन को
मिठास से भर लेते हैं।

कल एक पड़ोसन घर आई
नैना मटकाई और फरमाई।
तुम्हारे पति, तुम पर
बहुत प्रेम बरसाते हैं।
अक्सर देखती हूं,
संग गाते हैं।
टहलाते हैं।
तुम्हारी रसोई से
हलवे की खुशबू रोज आती है।
शाम को बातों की
आवाज भी सुनाती है।
उसकी बात सुनकर
मैं थोड़ा शरमाई
नजरें झुकाकर
धीरे से मुस्कुराई।
हालांकि
मुझे ठहाके लगाकर हँसना पसंद है।
पर उन्हें ... मेरा,
धीरे से मुस्कुराना.....

डॉ डॉली शर्मा

A-501 कौटिल्य 56
न्यू सी जी रोड चांदखेडा
अहमदाबाद, दूरभाष -7227993852

फ़ैमिली डाक्टर.....

महेन्द्र महर्षि

1950 के दशक की बात रही होगी। वे सिविल सर्जन थे। बड़ा रुतबा रखते हुए भी अस्पताल के बाद वे मरीज़ों की ज़रूरत के अनुसार शहर के गली कूचों में रहने वाले लोगों के घर आम ताँगे में बैठकर चले आते थे। उनका स्टैथस्कोप उनके हाथ में होता और डाक्टरी बैग, घर पर साथ लाने वाला पकड़े होता। मरीज़ की कलाई पकड़ कर वे नब्ज देखते , ज़ुबान दिखाने को कहते और कब और क्या खाया, पेट कैसा है, पानी कितना पी रहे हैं और कितना निस्तारण कर रहे हैं आदि बातें बड़े प्यार लेकिन गंभीर चेहरे से पूछते। घर की कापी से या अलग से काग़ज़ माँग कर दवाएँ लिखते, कब कब कौनसी दवा देनी है यह घर के तीमारदार को बताते और बता देते कि लिखी गईं कितनी दवाएँ अस्पताल से और कितनी बाज़ार से लानी होंगी। मरीज़ की ओर मुड़ कर मुस्कुराते हुए ढाढ़स देते कि दवा ठीक से वक्त पर लोगे तो कुछ नहीं है, ठीक हो जाओगे। मरीज़ भी फीकी ही सही,मुस्कान देता और उम्मीदजदा होकर प्रसन्न सा दिखने लगता। जब डाक्टर साहब वापस निकल रहे होते तो तीमारदारों में से कोई बैग उठाकर उनके बराबर में चलते हुए मरीज़ के बारे में सच क्या है पूछ लेता। घर के बाहर के दरवाज़े पर पहुँच कर उनकी विज़िटिंग फ़ीस के तीन रूपये उनकी हथेली में चिपका देता जिसे वे बिना देखे जेब में डाल लेते। ताँगे वाला उनका बैग लपक कर पकड़ लेता। डाक्टर साहब ताँगे की पिछली सीट पर बैठ हाथ जोड़ते विदा हो जाते।

एक दूसरा सीन। खाँसी बुख़ार हो गया है, बच्चे के पेट में गड़बड़ी है, दांत में दर्द है, आँख आ गई है, चोट लगी थी, घाव ठीक

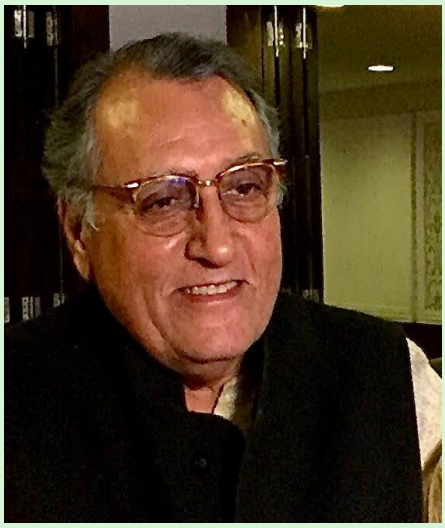

नहीं हो रहा है या सिरदर्द रहता है, डाक्टर शारदा का क्लीनिक मुहल्ले में है। सुबह आठ से बारह और फिर चार बजे से आठ बजे रात तक कभी भी पहुँच जाओ। बैंच पर मरीज़ अपनी बारी का इंतज़ार कर रहे हैं। आप भी लाइन में लग जाओ। पर्ची डाक्टर ख़ुद बनाते और कम्पाउण्डर पैसे लेकर दवा के डोज़ कब कब लेने हैं, आदि बताकर पुड़िया शीशी पकड़ा देता। कुल पैसे दो तीन रूपये के बीच बनते। दवा एक या अधिक से अधिक दो दिन की दी जाती और अगली तारीख़ पर दवा के असर की रिपोर्ट के बाद ही ज़रूरी बदलाव किया जाता। पट्टी करने वाले कम्पाउण्डर की ऊँची मेज़ पर बैठना/लेटना होता। टिंचर और स्पिरिट की गंध उस घाव में टिंचर या पीली दवा से होने वाले दर्द के लिए तैय्यार हो जाने का संकेत होती।

आपरेशन बहुत बड़ी बीमारी के लिए होता था।आपरेशन चाहे कोई भी क्यों न करे , सलाह फ़ैमिली डाक्टर की रहती।

तब हक़ीम साहब / वैद्य जी और बूढ़े पंसारी भी, मुहल्ले मुहल्ले में लोगों की बीमारियों के काढ़े/नुस्ख़े देकर इलाज कर डालते थे। इन्हें फिर भी झोलाछाप डॉक्टर नहीं कहा जाता था। इज़्ज़त की तो कोई कमी ही नहीं थी।सम्मान उनके व्यवहारिक तजुर्बे का रहता था।

दादी-नानी के घरेलू नुस्ख़े भी कम कारगर नहीं होते थे। कुछ टोटके भी काम कर जाते थे। मानों कि नज़र लग गई है, तो फिटकिरी का टुकड़ा सात बार , शर्त यह कि किसी के बिना टोके, सर पर उल्टे हाथ की दिशा में घुमाओ और अंगारे पर डाल दो। उसके फूलने पर उठाकर घुमा फिरा कर देखो तो नज़र लगाने वाले की शक्ल दिख जाएगी, (मुझे कभी नहीं दिखी) सवाल करके टोकाटाकी निषेध होती। फिटकिरी के फूले को घर की चौखट पर रख कर उल्टे पैर के अंगूठे से मसल दो। नज़र उतरने के बाद बीमार ठीक भी हो जाता था।

होमियोपैथी की किताब पढ़े कई डाक्टर भी धड़ल्ले से मीठी गोलियों से वास्तव में कारगर इलाज करते थे। उनकी पढ़ाई के डिस्टेन्स लर्निंग के सर्टिफिकेट कोर्स मान्य होते थे। बच्चों के लिए मीठी गोली वाले डाक्टर सबसे मुफ़ीद माने जाते थे।

यह वो वक्त था जब ग़रीबी में भी ख़ुशहाली बसती थी। अब के हालात से कहीं ज़्यादा मुस्कान , लोग डाक्टर साहबान के उपचार से इकट्ठा कर लेते थे।

बेशक तकनीक और नयी नयी सिंथेटिक व जेनेरिक दवाओं ने रोगों पर क़ाबू पाया है लेकिन लोग प्रकृति से दूर निकल गए हैं। खानपान में विषैले स्प्रे से सनी सब्ज़ियों और फलों पौधों में कम्पनी की खाद भी अपना असर छोड़ रही हैं। पशुओं का चारा भी इन्हीं खेतों से उपजता है। दूध, मांसाहारी भोजन और अंडे भी अब 'देसीपना ' जैसा गुण खो बैठे हैं। आदमी ने अपने लिए दर्द विषैले वातावरण और खानपान से जुटा लिया है। हम दर्द को पालने लगे हैं ,गोलियों से छिपाने लगे हैं।

अब फ़ैमिली डाक्टर हमारी ज़िन्दगियों से ग़ायब हो गए हैं। नस नस के एक्सपर्ट हैं जिनका क्लीनिकल सैन्स अनेक लेबोरेटरी जाँच पर आकर ही टिकता है। मैं नहीं कहता कि जाँच वाहियात ड्रिल है। लेकिन लालच और अनेक तरह के 'कट्स' व साँठगाँठ आम रोगी को कहीं से चूस भी रहे हैं।

आज मंगलवार,18 मई,2021 की सुबह जब सूरज चढ़ा तो दिन की शुरुआत एक अंधेरे की खबर से हुई। दूर देश के कौनों में बैठे लाखों लोगों को परामर्श देने वाले, उनके रोग का उपचार बताने वाले,मेरे , आपके और पूरे समाज के "फ़ैमिली डाक्टर " के.के. अग्रवाल स्वयं दिल्ली के एम्स में एक एक साँस के लिए संघर्ष करते हुए आख़िर स्वयं ही कल देर रात परास्त हो गए।

उन्होंने कोरोना की वैक्सीन भी ले ली थी जिसकी सलाह वे लोगों को पिछले कई महीनों से अपने परामर्श कार्यक्रमों में देते रहे थे। लोगों तक बड़ी सरल भाषा में मेडिकल सम्बंधित राय को पहुँचाने की कुशलता ने ही उन्हें समाज का "फ़ैमिली डाक्टर साहब" बना दिया था। यह दुःखद है कि वे स्वयं अपने लिए सुरक्षा कवच नहीं पहन पाए।

उनका निधन लोगों के मन में वैक्सीन के कारगर होने के प्रति संदेह पैदा करता है। ज़रूरी है कि तत्काल दिल्ली एम्स , स्थितियों की कारण सहित जानकारी देश से साझा करे ताकि वैक्सीन लगाने की गति धीमी न पड़ जाए।

देश में के.के. के जज़्बे वाले डाक्टर और भी होंगे। उनके लिए इस पुनीत कार्य को आगे बढ़ा , परंपरा को क़ायम रखना श्रेयस्कर और उनके प्रति सम्मान प्रकट करने जैसा होगा।

कैप्सूल- गोली या सुई लेकर हमें दर्द के साथ रहना नहीं है उसके कारण को नेस्तनाबूत करना है। कोई संदेह नहीं हम कर सकते हैं, कामयाब हो सकते हैं।

महेन्द्र महर्षि-

मैं.....

मैं कोई किताब नही,.
एक कविता भी नहीं
एक शब्द भी नहीं
मेरा कोई अक्स नहीं
कोई रूप नहीं

सिर्फ भाव् है
विचारों का एक पुलिंदा
विचार और भाव जब फैलते हैं
दिगंत में
प्रकृति के हर बोसे में

मेरा अक्स फैल जाता है
चारो दिशा में
पूरब की सोंधी हवा के साथ
बहता है मेरा रूप
हर बोसे में घुला मिला
हर जीवन से मिला जुला

सूरज की आभा सा
बेमेल सपने दिखाता
खुद की दीवारों को ढहाता
और कभी
पावस की स्वाति का
मोती चुगता

बादल की उंगली थामे
भ्रंतियो के घोंसले से निकल
बर्फ की रूहानियत ओढ़े
समेटे किसी ऋषि का वरदान

अभिशिप्ता अहिल्या को छू भर कर
पा जाता उस पारलौकिकता को
और फिर शब्दों का आँचल पकड

आस्था को साकार बनाने
सुनने और बाचने
लगता है
तेरे मेरे सुख दुःख ,
मेरे तेरे दुःख सुख

मंजुल भटनागर

सोच

हरी बाबू परेशान से हो गये। बिटिया की शादी से कुछेक घण्टे पहले जो खबर उन्हें दी गयी, वह परेशान करने के लिए काफी थी। विवाह की लगभग सारी तैयारियाँ हो चुकी थीं- विवाह हाथ के बाद चूड़ा पहनाने की रस्म तक हो चुकी थी।कुछ घण्टे ही शेष बचे थे बारात आने में।

" हरी!" बाहर से आते हुए उनकी मौसी ने आवाज़ लगाई। वह इसी क्षेत्र में रहती थीं।

" हाँ, मौसी। प्रणाम। कैसी हैं आप? आज सुबह से नहीं आई!"

"अरे, मैं तो ठीक हूँ। क्या कर रहे हो तुम?" उनके स्वर में चिंता और आश्चर्य दोनों थे।

" क्या हुआ?" हरी मुस्काये।

" मुस्काने की बात नहीं है। जानते हो किस परिवार में रिश्ता कर रहे हो?"

"----" चुपचाप देखते भर रहे हरी बाबू।

" इनके बड़े लड़के ने अपनी ससुराल से नहीं निभायी, जो यहीं है इसी कॉलोनी में।"

" तो क्या? परिवार में हर तरह के लोग होते हैं। फिर यह रिश्ता देखभाल करके ही किया है। अपनी बहन के मामा ससुर का लड़का है।"

" परिवार तो एक ही है दोनों का!"

" आप भी क्या लेकर बैठ गईं! सभी कुछ तो हो चुका अब! पीछे मुड़ने का सवाल ही नहीं है! और सभी भाई अपने अपने व्यवसाय करते हैं, अलग अलग रहते हैं। और हाँ, यही लड़का माँ बाप से सबसे अधिक निकट है।"

मौसी चुप रही। हरी बाबू के मन में आशंका का बीज उग रहा था। वे सोचने लगे---

-- जब वे लड़का देखने गये थे, पूछने पर उसने बताया था:

" जितना कमाता हूँ वह फिलहाल अपने परिवार के लिए पर्याप्त है। हाँ, परिवार को भूखे नहीं सोने दूँगा।"

-- लड़के में अपनी सोच है, वह किसी दूसरे भाई पर आश्रित नहीं है। जबकि तीन भाई आसपास रहते हैं, वह अपना व्यवसाय अलग करता है- कोचिंग का---

तभी बाहर बादलों के गरजने से उनकी तंद्रा टूटी। बारिश होने लगी तो हरीबाबू सपरिवार तैयारी में जुट गये।

- अशोक जैन, गुरुग्राम

रावण तो हमने जला दिया

जहां सत्य झूठ को हरा सके ऐसे निजाम की की जाए
रावण तो हमने जला दिया, अब बात राम की की जाए

बचपन बीता, यौवन देखा जिसने महलों के आंगन में
तज राजतिलक वो सहज चले पितु-वचन निभाने को वन में
ना मन में कोई क्लेश हुआ, ना कुछ कटुता का भाव रहा
विपदाएं जितनी भी आई, मर्यादा से हर कष्ट सहा
सुख-दुख समत्व का भाव रहे, ऐसे मकाम की की जाए
रावण तो हमने जला दिया, अब बात राम की की जाए

प्राणों से प्यारा वचन जिसे कुछ बातें उस दशरथ की हों
सत्ता पाकर जिन मोह नहीं ऐसे युवराज भरत की हों
कर्तव्य-बोध से वन धाए हो बात लक्ष्मण, सीता की
कुछ धैर्यशील कौशल्या की, कुछ उर्मिल सी परिणीता की
जो कर्मयोग का साक्ष्य बना उस जनक धाम की की जाए
रावण तो हमने जला दिया अब बात राम की की जाए

अन्याय विभीषण के प्रति भी इतिहासकार ने किया बड़ा
उसको जाफर जयचंदों के समकक्ष बना कर किया खड़ा
लंका को जिसने पाप मुक्त करने का पुण्य विचार किया
उसको घर का भेदी कहकर इस दुनिया ने धिक्कार दिया
राजा के सम्मुख सत्य कहे ऐसी ज़बान की की जाए
रावण तो हमने जला दिया, अब बात राम की की जाए

जब जिक्र शिखर का आएगा बातें नीचों की भी होंगी
जो स्वर्ण-वेश धर भ्रमित करें उन मारीचों की भी होंगी
लक्ष्मण रेखा उल्लंघन का, कुछ चर्चा सियाहरण का भी
जब जिक्र राम का आएगा तब आएगा रावण का भी
जो छल-फरेब से बचा सके उस इंतजाम की की जाए
रावण तो हमने जला दिया, अब बात राम की की जाए

कपड़ों का रंग बदलने से भीतर में संत नहीं होता
पुतले कितने ही करें दहन रावण का अंत नहीं होता
है दहन जरूरी भीतर में कुछ मोह और अभिलाषा का
तब हटे अंधेरा और मिटे अस्तित्व विषाद, निराशा का
कुछ अहंकार, कुछ काम-क्रोध पर रोकथाम की की जाए
रावण तो हमने जला दिया, अब बात राम की की जाए

यशपाल सिंह

नाम और काम

नाम और काम

नाम कमाने के लिए
काम करना पड़ता है
भगत सिंह ने लड़ के
नाम कमाया
प्रेमचंद ने लिख कर
नाम कमाया
कुम्भकर्ण ने सोकर
नाम कमाया
डिंपल कपाडिया ने रोकर
नाम कमाया
निरुपमा राय ने
अमर, अकबर, एंथनी
को खोकर नाम कमाया
किसानों ने धान बोकर
नाम कमाया
मजदूरों ने अनाज ढोकर

डॉ. राम प्रवेश रजक

यशपाल सिंह यश

1.

महात्मा गांधी

कह महात्मा कुछ गए, कुछ कह नग्न फकीर।
बापू गांधी बन गए, भारत की तस्वीर।।
सत्याग्रह के साथ ये, जग को दिया विचार।
सत्य अहिंसा भी कभी, बन सकते हथियार।।
अच्छाई में मनुज की, पक्का गर विश्वास।
दुश्मन भी लगने लगे, अपने दिल के पास।।
दुष्कर्मों का कीजिए, जमकर खूब विरोध।
लेकिन कर्ता के लिए, नफरत ना प्रतिशोध।।
अर्जुन को श्री कृष्ण भी, दिए यही संदेश।
मैं ही सब में व्याप्त हूं, अलग अलग बस वेश।।
खादी में जिसको दिखे, इक मजदूर किसान।
उसको ही आया समझ, चरखे का विज्ञान।।
उसको ही आया समझ, गीता का यह लेख।
जो अपने भीतर उसे, सबके भीतर देख।।

2.

श्राद्ध पक्ष

मान हमारा क्या मरने के बाद किया जाए
श्राद्ध-पक्ष में कैसे हम को याद किया जाए
अर्पण-तर्पण ठीक मगर कुछ जिक्र हमारा हो
काम कोय तो ऐसा भी इक-आध किया जाए
पंख किसी के सपने को गर दिया नहीं जाता
पंख काटने का भी ना अपराध किया जाए
कुछ अच्छे पद चिन्हों पर तो चल ही सकते हैं
मौलिक लेखन अगर नहीं अनुवाद किया जाए
वृद्ध बुजुर्गों की केवल इतनी सी चाहत है
पास बैठकर उनसे भी संवाद किया जाए
क्या कर्तव्य हमारे प्रति संतान निभाएंगी
इन बातों में वक्त नहीं बर्बाद किया जाए
केवल आज हाथ में 'यश' कर लेना जो करना
समय गया फिर मन में क्या अवसाद किया जाए

डॉ मरला सिंह स्निग्धा

गणतंत्र दिवस मनायें

गणतंत्र दिवस मनायें,
ये गणराज्य मुस्कुराये।
पावन धरा ये है हमारी,
इसको और जगमगायें।
नदियां गाती कल-कल,
चलो निर्मल इसे बनायें।
पर्वत कहते सिर उठाके,
सबसे ऊंचा इसे बनायें।
नवजागरण लेकर चलें,
हमारा देश जगमगाये।
गणतंत्र दिवस मनायें,
ये गणराज्य मुस्कुराये।
ज्ञान औ विज्ञान पूरित ,
इसे जग का गुरु बनायें।
वीरों की भूमि ये पावन,
सर्वोच्चतम इसे बनायें।
गणतंत्र दिवस मनायें,
ये गणराज्य मुस्कुराये।
राम व कृष्ण की धरती,
पावनतम इसे बनायें।
विविध वेशभूषा वाली,
चलो अनुपम इसे बनायें।
कांटों को हम चुनके फेंकें,
बस फूलों से ये मुस्कुराये।
छोड़ दें सब भेद दिल से,
मानवता को अपनायें।
गणतंत्र दिवस मनायें,
ये गणराज्य मुस्कुराये।

क़िस्सा दिल्ली का

दिल्ली और दिल्ली की पढ़ाई-लिखाई

मेरी लाडो को ले दो किताब
स-कूल जाए पढ़ने को
बने अफ़सर कलक्टर नवाब
सकूल जाए पढ़ने को

नमस्ते दोस्तों।
आप सोच रहे होंगे आज क्या हुआ।
भई हमें कुछ नही हुआ!
बात ये है कि बात दिल्ली की है और दिल्ली में पढ़ाई-लिखाई पर विशेष ज़ोर दिया जाता रहा है।
पुराने समय में जब आमतौर पर लड़कियों की शिक्षा उतनी ज़रूरी नहीं समझी जाती थी तब भी लड़कियों को कुछ शिक्षित करने का प्रचलन था दिल्ली में । लड़कियों का अमूमन कान-छिदाई 3 से 5 साल की आयु में किया जाता था। तब ढोलक बजाती औरतें गाना गातीं थी -

मेरी लाडो को ले दो किताब
स-कूल जाए पढ़ने को
बने अफ़सर कलक्टर नवाब
सकूल जाए पढ़ने को

शादी ब्याह में बन्ना बन्नी गाए जाते

मेरी बन्नी पढ़ी और लिखी,
वो गिटपिट बोले अंगरेज़ी
बन्ना कहे तुझे मेले घुमा दूँ
बन्ना कहे तुझे मेले घुमा दूँ
बन्नी तो कौलेज चली
वो गिटपिट बोले अंगरेज़ी

ह ह ह ह साथियों ! पढ़ाई की ये बानगी केवल रीति रिवाज़ तक ही सीमित नही थी । आज भी धार्मिक अनुष्ठानो में भी शिक्षा को साथ-साथ महत्व दिया जाता है।
दीपावली पूजन में गणेश लक्ष्मी के साथ साथ कलम-दवात की पूजा की जाती है। स्कूल और कौलेज जाने वाले बच्चे पूजा में गणेश जी के आगे अपने कोर्स की किताबें और कॉपियाँ, पेन पेंसिल वग़ैरह रखते हैं। गणेश लक्ष्मी के

वंदना अरिमर्दन

साथ साथ इन किताबों और कॉपियों को भी रोली चावल से टीका करते हैं भोग लगाते हैं। भगवान से ज्ञान का दान माँगा जाता है।कहते हैं रावण को दसों दिशाओं का ज्ञान था।
दशहरे पर भी रावण के आगे कलम दवात या आजकल पेन और कॉपी रख कर पूजा की जाती है। यानि कि अगर ज्ञान दुश्मन से भी मिले तो ले लेना चाहिए।
तो शिक्षा की ये परम्परा दिल्ली में सदियों से चली आ रही है।कहा जाता है कि दिल्ली में तोमर और चौहान राजाओं के समय में शिक्षा का बड़ा महत्व था।इसके बाद सुल्तान आए तो उन्होंने शिक्षा यानि तालीम की ये परम्परा क़ायम रखी।मदरसा ए ग़ाज़ी शिक्षा के लिए बहुत प्रसिद्ध था। मदरसा-ए-नासिरिया के व्यवस्थापक प्रसिद्ध विद्वान और बुज़ुर्ग अबू उमर मिनहाजुस्सिराज थे।
मगर दिल्ली के आम घरों में भी तालीम देने का रिवाज़ था।
एक क़िस्सा है । ख़्वाजा शम्सुद्दीन ख्वारज़मी एक कमरे में पढ़ाया करते थे । बहुत से बच्चे इस कमरे में पढ़ने आते।
हज़रत निज़ामुद्दीन औलिया को पता चला कि यहाँ बच्चों को पढ़ाया जाता है । वे जब दिल्ली आए तो इस कमरे में भी आए। कहते हैं कि इतने अच्छे तरीक़े से वहाँ पढ़ाया जा रहा था कि हज़रत निज़ामुद्दीन भी यहाँ तालीम पाने लगे। यह कमरा मदरसा दर्सगाह-ए-ख़्वाजा शम्सुद्दीन ख्वारज़मी कहलाने लगा। कहते हैं यहाँ मौलाना क़ुतुबुद्दीन हजरत और मौलाना बुरहानुद्दीन अब्दुल ने भी शिक्षा पायी।
तो छोटे से छोटा शिक्षा का स्थल अपने आप में एक संस्थान था, एक institute।मदरसा-ए-फिरोजशाही एक विश्वविद्यालय का दर्जा रखता था।
मदरसों में गणित,ज्योतिष,भूगोल और भाषा की शिक्षा दी जाती थी।कायस्थों में शिक्षा का बहुत ज़्यादा महत्व था। साहित्य और सरकारी कामकाज की भाषा सीखने

में वे पहले थे। भाषा में इनकी पकड़ विशेष थी।इसलिए आगे आने वाले शिक्षा संस्थानों में इनकी हमेशा पहल रही।ये आगे रहते थे।कुछ मुख्य शिक्षा संस्थान थे दारुल बक़ा - यहाँ न्यायशास्त्र पढ़ाया जाता था। मदरसा-ए-मोहतसिब - यहाँ व्याख्याशास्त्र और भाष्य पढ़ाया जाता था।

और सबसे प्रसिद्ध अजमेरी गेट पर स्थित मदरसा ग़ाज़ीउद्दीनखाँ- यहाँ पर तो कई विषय पढ़ाए जाते थे।

यही बाद में दिल्ली कॉलेज कहलाया।

दिल्ली कॉलेज तो अपने आप में एक क़िस्सा है।

अंग्रेज ने 1812-13 के आसपास ये कोशिश की कि भारतीयों को अंग्रेज़ी शिक्षा दी जाए जिससे उनके सरकारी कामों के लिए लोग मिल सके।जो उनकी भाषा समझ सकें। उन्होंने 1825 में मदरसा ग़ाज़ीउद्दीनखाँ को अंग्रेज़ी कॉलेज में बदल कर इसका नाम रखा दिल्ली कॉलेज।

कुछ समय बाद इसका नाम फिर बदला गया और ये बना- ऐंग्लो अरेबिक कॉलेज ऑफ़ Delhi।आज़ादी के बाद ये फिर से दिल्ली कॉलेज हो गया और दिल्ली यूनिवर्सिटी में आ गया। शिक्षा की पुरानी पद्धति बदलती गयी। उस समय के नामी प्रोफ़ेसर थे - मास्टर रामचंद्र. मास्टर प्यारेलाल 'आशोब', मुकुंदलाल माथुर,मौलवी ज़काउल्लाह,मुंशी भैरो प्रसाद।मास्टर रामचंद्र (1821–1880) एक ब्रिटिश इंडियन गणितज्ञ (mathematician). थे उनकी किताब थी Treatise on Problems of Maxima and Minima. ये बहुत पढ़ाई जाती रही है और इस पुस्तक को it promote किया था महान गणितज्ञ ऑगस्टस ड मॉर्गन (prominent mathematician Augustus De Morgan)ने।

एक क़िस्सा और है

उन दिनो दिल्ली कॉलेज का प्रिन्सिपल एक अंग्रेज प्रोफ़ेसर था। मिर्ज़ा असदुल्ला खाँ ग़ालिब की क़ाबिलियत का वो मुरीद था। उनका प्रशंसक भी था। जैसा कि आप सब जानते ही हैं कि उर्दू, फ़ारसी में मिर्ज़ा ग़ालिब को महारत हासिल थी।मिर्ज़ा ग़ालिब बहुत तंगहालर् थे। ग़ालिब को दिल्ली कॉलेज में पढ़ाने के लिए नौकरी का ऑफ़र इन अंग्रेज प्रोफ़ेसर साहब ने दिया।

ग़ालिब साहब ने नौकरी मंज़ूर कर ली।

ग़ालिब साहब ख़ुश थे। उन्होंने अपनी बेगम साहिबा से कहा कि बेगम! हम ज़रा अजमेरी गेट तक जा रहे हैं। दिल्ली कॉलेज में पढ़ाया करेंगे हम । भाई मियाँ को कहलवा दो कि ज़रा हमारी पालकी तैयार करे ।

ग़ालिब पालकी में बैठ कर दिल्ली कॉलेज पहुँचे । प्रिन्सिपल दोस्त को ख़बर पहुँचाई कि पहुँच गए, गेट पर हैं।और वहीं पालकी पर बैठे-बैठे ही इंतज़ार करने लगे। थोड़ी देर इंतज़ार किया पर इस्तक़बाल (स्वागत) के लिए कोई न पहुँचा। प्रिन्सिपल साहब नहीं आए।ग़ालिब कुछ नाराज़ और कुछ दुखी हो कर बोले-

पालकी घुमा लो भाई मियाँ।

तुम न आए तो क्या सहर न हुई
हाँ मगर चैन से बसर न हुई
मेरा नाला सुना ज़माने ने
एक तुम हो जिसे ख़बर न हुई

ये कहते हुए ग़ालिब ने अपनी पालकी को मुड़वा लिया। घर आए । बेगम ने और दोस्तों ने समझाया कि भई आप मेहमान नही थे, नौकरी के लिए गए थे। आप को खुद प्रिन्सिपल के पास जाना चाहिए था।

तब मिर्ज़ा बोले-

" प्रिन्सिपल मेरा दोस्त है।ऐसी नौकरी किस काम की जिसमें दोस्ती भी न रहे। वो प्रिन्सिपल ही तो है । ख़ुदा तो नहीं। और चाह हो तो ख़ुदा भी मिल जाता है।

था कुछ तो खुदा था,
कुछ न होता तो खुदा होता।
डुबोया मुझ को होने ने,
न होता मैं तो क्या होता।

ऐसे हैं दिल्ली के क़िस्से ।

एक और क़िस्सा मुंशी भैरो प्रसाद का है जो दिल्ली के कायस्थ घराने से थे।दिल्ली कॉलेज से शिक्षा पाई।बड़े तीव्र बुद्धि। उस जमाने में जब पास होना बड़ी बात थी,ये साहब फ़र्स्ट आते थे।

Gold medalist। स्वर्ण पदक विजेता।वो 1865 में गवर्न्मेंट हाई स्कूल के हेडमास्टर नियुक्त हुए। बाद में वो अपनी क़ाबिलियत से दिल्ली कॉलेज में असिस्टेंट प्रोफ़ेसर बन गए। जाड़े में मख़मल की अचकन और गर्मी में कुर्ता पजामा पहनते थे।नाड़ा अक्सर लटका रहता था। जिसकी तरफ़ से वो एकदम लापरवाह थे। उनका बहुत रुतबा था।बहुत विद्वान थे और साथ ही कायस्थ होने के कारण फ़ारसी में भी

दक्ष थे इसलिए शिक्षित वर्ग में उनका बहुत सम्मान था।
बात 1877 की है जब ये फ़ैसला किया गया कि दिल्ली कॉलेज बंद किया जाएगा।

मुंशी भैरो प्रसाद जोश और क्रोध में भर गए। वो बहुत आहत भी थे कि क्या दिल्ली कॉलेज बंद किया जाएगा ? उन्होंने इस निर्णय का विरोध खुलकर करना शुरू कर दिया।एक दिन मुंशी भैरो प्रसाद एक सभा में पूरे जोश से बोल रहे थे - मै दिल्ली कॉलेज बंद नहीं होने दूँगा ।मैं ये नही होने दूँगा। मै आंदोलन करूँगा।जो जो मेरे साथ हैं वो इस आंदोलन में शामिल हों।शिक्षा संस्थान को बंद करना अपराध है,अन्याय है।"

अंग्रेज़ों के कुछ भारतीय चमचे ये सुन रहे थे। वे मज़ाक़ उड़ाने लगे - "अरे सुना तुमने !मुंशी जी आंदोलन संभालेंगे।
दूसरा मज़ाक़ उड़ाते हुए बोला - अरे पहले अपना नाड़ा ही सम्भाल लें मुंशी जी। आंदोलन को तो अंग्रेज़ी हुकूमत ही सम्भाल लेगी।"
लेकिन मुंशी जी ऐसी बातों पर कहाँ कान धरने वाले थे।
उस समय भी शिक्षा का दिल्ली में इतना महत्व था कि आम दिल्ली वासी इस निर्णय के विरुद्ध खड़ा हो गया। मुंशी भैरो प्रसाद की एक आवाज़ पर देखते ही देखते आंदोलन छिड़ गया।
मुंशी भैरो प्रसाद के साथ एक शिष्ट मंडल वायसराय से मिला।आख़िरकार मुंशी जी के तर्कों और शिक्षा की ज़रूरत पर मुंशी जी और बाक़ी शिष्ट मंडल के विचारों के आगे वायसराय को झुकना ही पड़ा।और दिल्ली कॉलेज चलता रहा।

1857 के दंगों में इस दिल्ली कॉलेज को जला दिया गया। कॉलेज के प्रिन्सिपल मिस्टर टेलर और अन्य अंग्रेज अधिकारी,भारतीय हिंदू और मुस्लिम प्रोफ़ेसर भी मारे गए।1924 में फिर इसे क़ायम किया गया। नाम वही दिया गया ऐंगलो अरेबिक कॉलेज ।आज़ादी के बाद इसका नाम फिर से दिल्ली कॉलेज रखा गया जो 1975 में ज़ाकिर हूसेन कॉलेज बना।
आज ये ज़ाकिर हूसेन दिल्ली कॉलेज है।
अब कॉलेज को नए भवन में शिफ़्ट कर दिया गया है।
अजमेरी गेट वाली बिल्डिंग अपने इतिहास के साथ सुरक्षित है।
मित्रों !यूँ तो ढाई अक्षर प्रेम के पढ़ने वाला पंडित हो जाता है परंतु पढ़ाई की कुछ बातें ऐसी भी हैं

मीर तक़ी मीर कहते हैं
ग़ज़ल मीर की कब पढ़ाई नहीं
ये हालात मुझे गश, कि आई नहीं

बशीर बद्र कहते हें
वो चेहरा रहा सामने
बड़ी ख़ूबसूरत पढ़ाई हुई

शारिक़ क़ैफ़ी कहते हैं
पढ़ाई चल रही है ज़िंदगी की
अभी उतरा नहीं बस्ता हमारा

तो ऐसे हैं दिल्ली के क़िस्से। कुछ सुने से कुछ अनसुने से I

शिवा नन्द सहयोगी

बाप-बेटे अलग हैं

रह गए आँकड़े सब
धरे के धरे,
तप रही दोपहर है
तवा की तरह |

कष्ट देने लगा है
समय का सहन,
बेकहा हो गई है
तनावी कहन,
आपसी मंत्रणा की
हुई है कमी,
लड़ रहा है कथन भी
लवा की तरह |

कैनवासों पे छाया
हुआ है कपट,
कुछ धुआँ उठ रहा, उठ
रही कुछ लपट,
आँधियों से हुआ है
गगन धुंधमय,
लू उबलती मिली है,
रवा की तरह |

भकभकाना पराली
का, कम न हुआ,
बंद होते न दिखते,
न रम, न जुआ,
व्याकरण जिंदगी का,
बदल सा गया,
विष खुराकी हुआ है,
दवा की तरह |

कुछ बची ही नहीं है,
धरा में नमी,
गीत में हो चुकी है,
परा की कमी,
एकता अब घरों की
हवा हो गई,
बाप-बेटे अलग हैं,
जवा की तरह |

लक्ष्य जीवन का स्वयं को जानना

आत्मा परमातना का अंश है
जीव के कण-कण में ही वह व्याप्त है
शुद्ध है,निर्मल है और निर्लिप्त है
देखने को वह कभी दिखती नहीं
ढूंढ़ते रहते ऋषिगण-बुद्धजन
पर ना देखा है किसीने आज तक
होता है आभास बस उस प्राणी में
जिस ने खोजा और पाया स्वयं में
आत्मा मरती नहीं जलती नहीं
ना ही पानी उस को गीला कर सके
प्राण ही इस जीव का आधार है
प्राण बिन निर्जीव हो जाता है वह
मृतयु ही निष्प्राण का आधार है
मर के जीवन पाती है फिर आत्मा
अथवा फिर परमात्मा में लीन हो
लक्ष्य अपना पूरा कर जाती है वह
भोग कर संसार में कर्मो का फल
जीव लेता रहता है फिर फिर जन्म
आत्मा तो सारथी है जीव की
जीव जब पहचानता है आत्मा
फिर कभी दुष्कर्म होता ही नहीं
मस्त हो कर भोगता ऐश्वर्या वह
फिर कभी वह लिप्त होता ही नहीं
देखता रहता है जैसे खेल है
साधना है आत्मा को जानना
ज्ञान से ही मिलता है परमात्मा
वश में हो जाता है मन उस प्राणी के
करता भाव छूट जाता है तभी
जीता रहता है वह अहोभाव से
साक्षी भाव से देख कर संसार को
मन में खुश रहता है वह सदा
लोभ-क्रोध -कामना होती नहीं
रहता है वह दूर ईर्ष्या-द्वेष से
सत्य-प्रेम-करुणा का भाव ले
सफल कर लेता है अपने लक्ष्य को

डा.केवलकृष्ण पाठक

लाल देवेन्द्र कुमार श्रीवास्तव

सद्कर्मों से बनती पहचान...

सद्कर्मों व सदविचार से, जीवन पथ होता आसान,
कलुषित भावना रखने से, हमारा होता है नुकसान।
सदमार्ग पर चलते रहने से, मिल जाती हमें मंजिल,
सदविचार व सद्कर्म से इंसान बन सकता महान।।

ईर्ष्या द्वेष रखने से, प्रगति के पथ हो जाते अवरुद्ध,
हीन भावना रखने से, अपने सगे हो जाते हैं विरुद्ध।
हमें सदैव रखना चाहिए, सकारात्मकता का भाव,
सकारात्मक विचार से, हम रहते तन मन से शुद्ध।।

धन दौलत के लालच में, हम करने लगते भ्रष्टाचार,
पद प्रतिष्ठा के मोह में, हम खो देते अपने संस्कार।
भौतिक सुख सुविधाओ के नाते, मति मारी जाती,
जरा जरा सी बात पर, अपनों से करते हैं तकरार।।

हमारे सद्कार्यों से ही, हमारी बनती है इक पहचान।
मदद और सहयोग से, हम बन सकते हैं नेक इंसान।
व्यक्ति के अच्छे कार्य ही, लोगों को सदा याद रहते,
न कभी भुलाना चाहिए, किसी ने किया एहसान।।

अगर भला न कर सकें, तो कभी किसी बुरा न चाहें,
किसी पर न करें दोषारोपण, बना लें ख़ुद नई राहें।
यदि कभी किसी ने किया, आपके साथ कोई भलाई,
छोटा भी यदि हो तो स्वागत करें, फैला अपनी बाहें।।

अभागी - बड़भागी

रवीन्द्र कान्त त्यागी

"हीटर का एक पॉइंट बढ़ा दे आशू। ठंड बढ़ गई है। लगता है आज सीजन की पहली बर्फ गिरेगी। और सुन। तेरा खाना वहाँ ओवन के पास ही रखा है। गरम करके खा ले। मुझे ये ऐस्से कंप्लीट करना है।"

"ओ मॉम डार्लिंग। एस्से कंप्लीट करने के बाद खाना दे देना पर ... खाऊंगा मैं तुम्हारे हाथ से ही।" तेरह साल के आशू ने मां का कंधा पकड़ते हुए कहा।

"बड़ा हो गया है रे। कब तक मां के पल्लू से बंधा रहेगा। ट्यूब से अकेला स्कूल जाता है। दोस्तों से दिन भर चैट करता है और निवाले खाता है मां के हाथ से। अच्छा तू चेंज कर ले। तब तक मैं कंप्लीट कर लेती हूँ। पापा भी आते ही होंगे।" श्रुति ने बेटे के सर पर हाथ फेरते हुए कहा।

बेटा कपड़े बदलने की बजाय मां के सामने राइटिंग टेबल पर बैठ गया और स्नेह के साथ मां को देखने लगा।

"मां ... तुम्हारे माथे पर ये चोट का निशान कैसा है। क्या बचपन में गिर पड़ी थीं।"

"काम करने दे आशू। ये सवाल कितनी बार तो पूछ चुका है।"

"और आप कितनी बार टाल चुकी हो मम्मी। बताओ न मम्मी प्लीज।" और जिद करते हुए आशू ने कंप्यूटर के कवर पर हाथ मार दिया। खट से स्क्रीन बंद हो गई। श्रुति ने क्रोध से बेटे की तरफ देखा। फिर अपने लाडले की शरारत पर ममता से मुस्करा दी।

"बहुत जिद्दी होता जा रहा है तू। अच्छा, तुझे एक कहानी पढ़वाती हूँ मगर एक शर्त है। तू इसके बाद कोई सवाल नहीं पूछेगा।"

"प्रौमिज़ माय डीयर मॉम। प्रौमिज़।"

"सामने शैल्फ पर किताबों के नीचे तीसरे नंबर पर जो डायरी रखी है, उसके पैंतीसवें पेज पर मेरी हैंड राइटिंग में ये कहानी लिखी है जो बरसों पहले इंडिया में राजस्थान स्टेट के भरतपुर शहर में शुरू हुई थी। तू पढ़ ले। तब तक पापा आ जाएंगे। फिर खाना खाते हैं। यू आर अ ब्रेव बॉय। अब तू बड़ा हो गया है। तुझ से कुछ भी छुपाने का कोई अर्थ नहीं है।"

"कैसा पीला सा रंग पड़ गया है रे जीतू। वहाँ तुझे खाना नहीं मिलता था क्या।"

"खाना तो मिलता था माँ पर तुम्हारे हाथ का नहीं। अब ये गोरी अंग्रेजन भला तेरे जैसा खाना बना सकती हैं क्या माँ।" जतन ने मुस्कराते हुए ममता से माँ के कंधों पर हाथ रखते हुए कहा।

"पहले चाय पिएगा या स्नान करेगा। ये गरम कपड़े उतार दे बेटा और पहले नहा ले। थकान उतर जाएगी। तब तक मैं तेरे लिए चाय बनाती हूँ।"

"अरे माँ, सुबह तीन बजे, लंदन में जब घर से एयरपोर्ट के लिए निकला तो ठंड के मारे जान निकली जा रही थी और यहाँ लू के थपेड़े चल

रहे हैं। माँ, पहले चाय ही बना दो। वो अदरक और इलायची वाली। जैसी तुम बनाया करती थीं। तुम्हारे हाथ की चाय पिये हुए तो बरसों गुजर गए हैं।"

"सात समंदर पार चला जाएगा तो ... वरना रोटी तो यहाँ भी मिल जाती।" माँ का स्वर भीग गया और वो रसोई की तरफ चली गई।

दस मिनट के बाद जब माँ हाथ में चाय का प्याला लेकर लौटी तो जतन ने कोट उतार कर पलंग पर फेंक दिया था और उसी खिड़की के पास खड़ा था जहां माँ उसे छोड़कर गई थी।

"अरे, अभी तक वहीं खड़ा है जतन। क्या देख रहा है।"

"न नहीं ... कुछ नहीं माँ। मैं कह रहा था कि पिताजी अभी तक नहीं लौटे।" जतन ने अनमने से मन से कहा।

"आते ही होंगे। गाँव से सुबह ही निकलने को कह रहे थे। बस नहीं मिली होगी। नंदराम के पोते के जसूटन में गए हैं। वैसे तो जाने का मन नहीं था। तबीयत भी ठीक नहीं रहती। अरे तेरे रिश्ते वालों ने बहुत परेशान कर रखा है। तपेश के चाचा ने बड़ा दबाव देकर बुलाया था। कह रहे थे कि तपेश की ससुराल पक्ष के सारे लोग फंगशन में आएंगे। उसकी साली बड़ी सुंदर है। पढ़ी लिखी भी है। कह रहे थे कि एक बार तेरे पिताजी को लड़की पर नजर लगवा देंगे। फिर बात आगे बढ़ाएँगे। पैसे वाले लोग हैं बेटा। बात बन गई तो तेरे लौटकर जाने से पहले ही शादी करने को तैयार हैं।"

"माँ ... अभी नहीं माँ। अभी मुझे ठीक से सैटल तो हो जाने दो। दो चार महीने में ट्रांसफर भी होने की उम्मीद है। न जाने दुनिया के किस कौने में भेज देगी कंपनी।"

"अरे तू बावला है जीतू। सत्ताईस अट्ठाईस का होने को है। अब क्या तुझ में बड़ पीपल फूटेंगे। हर बार ऐसे ही टालकर चला जाता है। इस बार हम तेरी एक न सुनेंगे। हम क्या पोते पोती का मुंह देखे बिना ही दुनिया से जाएंगे।"

"मगर मां ...।" जतन एक ठंडी सी आह लेकर सोफ़े पर बैठ गया।

"जतन बेटा ... जो गुजर गया वो समय वापस आ सकता है क्या।" मां उसके बालों में हाथ फिराते हुए कहने लगी।

"पुरानी यादों को स्लेट पर लिखी इबारत की तरह पोंछ कर अपने दिल से मिटा दे बेटा। वो अभागी अपने दुर्भाग्य की छाया अपने साथ लिए दूसरे घर चली गई है।" माँ ने दोबारा कहा।

"अभागी ... दुर्भाग्य। क्या हुआ है मां।"

"तू दिल का बड़ा कमजोर है रे। इसी लिए हम ने तुझे कुछ नहीं बताय। अपनी किस्मत के पन्ने काली स्याही से लिखवाकर लायी है सुर्ती। शादी से सात दिन पहले बाप मर गया। परिवार की तंगहाली को देखते हुए समाज और रिशतेदारों ने नियत समय पर ही फेरे डालने उचित समझे। बूढ़े बुढ़िया के पास जो कुछ जोड़ा जुगाड़ा था वो तो शादी की तैयारियों में लगा दिया था। सब का मानना था कि ये दिन टल गया तो न जाने फिर कभी गरीब मां बाप की बेटी डोली चढ़ेगी या नहीं। एक तरफ चिता की आग भी ठंडी नहीं हुई थी और दूसरी तरफ रोती बिलखती सुर्ती अपनी विधवा माँ को अकेला छोड़कर ससुराल चली गई।"

"चलो मां। एक तरह से अच्छा ही हुआ। श्रुति अपने घर चली गई। अब जिये अपनी जिंदगी। अपनी दुनिया में। अपनी घिरस्ती में।"

"काहे की घिरस्ती बेटा। चल तू नहा ले। तेरे कपड़े बाथरूम में रख दिये हैं। सुन बेटा। अब बहू ले आ। कब तक माँ से काम कराता रहेगा।"

"अरे माँ, अभी तो मैं तुम्हारा छोटा सा नन्हा बच्चा हूँ। पर ...पर तुम ने ये क्यूँ कहा कि 'काहे की घिरस्ती।"

"जा, तू नहा ले। आते ही अपना मन खराब मत कर। उस अभागी की घिरस्ती तो शादी के छह महीने बाद ही बिखर गई थी। बस ... अब तो उस घर की नौकरानी बनकर रह गई है। सुर्ती की माँ सब बताती है।" माँ ने दुखी होकर एक ठंडी आह सी लेकर कहा।

"क्या बताती है श्रुति की मां। क्या हुआ है उसके साथ। मुझे बताओ न मां। आखिर हुआ क्या है।" जतन कुर्सी सरकाकर उस पर बैठ गया।

"छोड़ बेटा। जो बीत गई सो बात गई। अभागी के भाग में जो लिखा था उसे कौन मिटा सकता है। क्या पता उसकी किस्मत में विधवा होना ही लिखा हो और इसी लिए विधाता ने तेरा उसके साथ ...। भगवान मेरे बेटे को लंबी उमर लगाए।" माँ ने बेटे के सर पर हाथ फिराते हुए कहा।

"विधवा ... क्या कह रही हो मां। श्रुति विधवा हो गई है? मर गया है उसका पति? अरे मां।

क्या हुआ उसे इस उम्र में। अभी तो शादी हुए दिन ही कितने हुए होंगे।"

"अब क्या कहूँ बेटा। श्रुति की मां का सोचकर दिल बैठ बैठ जाता है। एक साल के भीतर पति चला गया। बेटी की शादी हुई तो दामाद को भगवान ने छीन लिया। बेचारी बिलकुल टूट गई है। अकेली बुढ़िया दुनिया में किस किस से टकराएगी। भाग्य से लड़े या जमाने से।"

"अब काहे की लड़ाई रह गई मां। सब कुछ तो लुट पिट गया है बेचारी का। मगर मां तुम भी आज पहेलियाँ बुझा रही हो। मुझे बताओ न मां। क्या छुपा रही हो।"

"उन लोगों ने बुढ़िया के मकान के लालच में उसकी बेटी को एक प्रकार से बंदी बना रखा है। अपनी माँ से भी बात नहीं करने देते। मगर न मुझे तुझ से कुछ और बताना है। न तुझे इस तरफ कोई ध्यान देने की जरूरत है। जीतू, चल खड़ा हो। नहा ले। तब तक तेरे पिताजी आते ही होंगे। फिर सब साथ बैठकर खाना खाएँगे। तू अब दोबारा इन सब झंझटों में अपना दिमाग खराब मत कर। पहले ही क्या थोड़ा हंगामा हुआ था। अब तू अपनी नई जिंदगी शुरू कर बेटा। मैं नहीं चाहती कि तेरे भावुक मन पर दोबारा उन घटनाओं की खरोंच भी लगे।"

तभी दरवाजे पर आहट हुई। नरेंद्र के पिता भगवान सहाय ने प्रवेश किया। नरेंद्र ने उनके पाँवों को हाथ लगाया और वे माथे का पसीना पौंछते हुए सोफ़े पर बैठ गए।

"यात्रा ठीक हो गई जतन। कोई दिक्कत तो नहीं हुई। कब पहुंचा।"

"सब ठीक रहा बाऊजी। अभी एक घंटा हुआ है।"

"शकुंतला ... मैं तो बात लगभग पक्की ही करके आ गया। पक्की क्या ... बस मैंने अपनी तरफ से हाँ कह दी है। अब वो भी एक बार हमारे बेटे को देख लें। बड़ी सुंदर लड़की है। लंबी गर्दन, बड़ी बड़ी आँखें। ऊंची पढ़ाई पढ़ रही है।" भगवान सहाय ने पत्नी को संबोधित करते हुए कहा।

"बाऊजी मैं ... मैं अभी ...।" जतन ने झिझकते हुए कहा।

"तुझ से पूछा किसी ने। पहले ही बहुत दंद फंद करके हमारी नाक कटवा चुका है। अगर उस रात श्रुति के मां बाप पुलिस में नहीं जाते और तुम दोनों को भागते हुए बस अड्डे पर पकड़ नहीं लिया जाता तो ... मेरा तो सोचकर ही मन दहल जाता है। इतनी बड़ी दुनिया में कहाँ भटकते रे तुम दोनों। ससुरी ये उम्र ही अंधी होती है। इंसान आगा पीछा कुछ सोचता ही नहीं। दो कपड़े बगल में दबाये और भाग लिए। जैसे बाहर दुनिया में कोई तुम्हारे लिए दफ़तरखान सजाये बैठा है। मार काटकर फेंक देता तुझे कोई और श्रुति को किसी कोठे पर बेच देता।"

"इतने दिनो में लड़का बाहर से आया है जी और आप आते ही अंगारों पर बैठ गए।" मां ने उलाहना देते हुए कहा। फिर एक ठंडी आह लेते हुए बोली "सब किस्मत की बात है जी। सुर्ती तो आज भी नरक में पड़ी है। कैसी भली सी लड़की है और ...। सच्ची कह रही हूँ। अगर बीरादरी विरादरी के झमेले नहीं होते तो मैं उसे अपनी बहू बना लेती। मुझे तो अम्मा – अम्मा कहते थकती नहीं थी।"

"तुम भी गंवार की गंवार ही रहोगी जानकी। हम अपने बेटे की जिंदगी को दोबारा पटरी पर लाने की कोशिश कर रहे हैं और तुम न जाने कौन सा राग लेकर बैठ गईं। भुगतेगी श्रुति जो उसकी किस्मत में होगा। गलती तो उसने भी की ही थी। अगर बदनामी नहीं हुई होती तो क्यूँ उसका बाप आनन फानन में ...।"

"गलती तो सुर्ती और हमारे बेटे की बराबर ही थी मगर इस दुनिया में औरत को ही भुगतना पड़ता है। अगर उस रात ... लड़की की जात है। मान बाप को कुछ सोचने समझने का मौका भी न मिला। बदनामी के डर से बूढ़े बुढ़िया ने बिना सोचे समझे उसे एक खाँटी किरमिनल के साथ ब्याह दिया और छह महीने गुजरने से पहले ही उसका पति पुलिस एनकाउंटर में मारा गया।" मां ने दुखी होकर कहा।

ये राजस्थान के रेतीले भाग का एक छोटा सा शहर था। शहर के बाहरी हिस्से में बड़ी सी खाली पड़ी जमीन पर किसी छुटभैये कौलोनाइजर ने छोटे बड़े बेतरतीब से प्लॉट काट रखे थे। दूर दूर इक्का दुक्का मकान बने हुए थे। बीच बीच में पड़ी खाली जगह में रेत के छोटे छोटे टीलों पर कंटीले कीकर की झड़ियों ने अपना अस्तित्व बचा रखा था जिन से गरम हवा टकराती तो कंटीली झाड़ियाँ क्रोध में आकर सुनहरी रेत के कण हवा में झोंक देते।

लगभग एक घंटे की मशक्कत और खोजबीन के बाद जतन ने एक मकान का दरवाजा खटखटाया। ये एक बिना प्लास्टर का कोई सौ

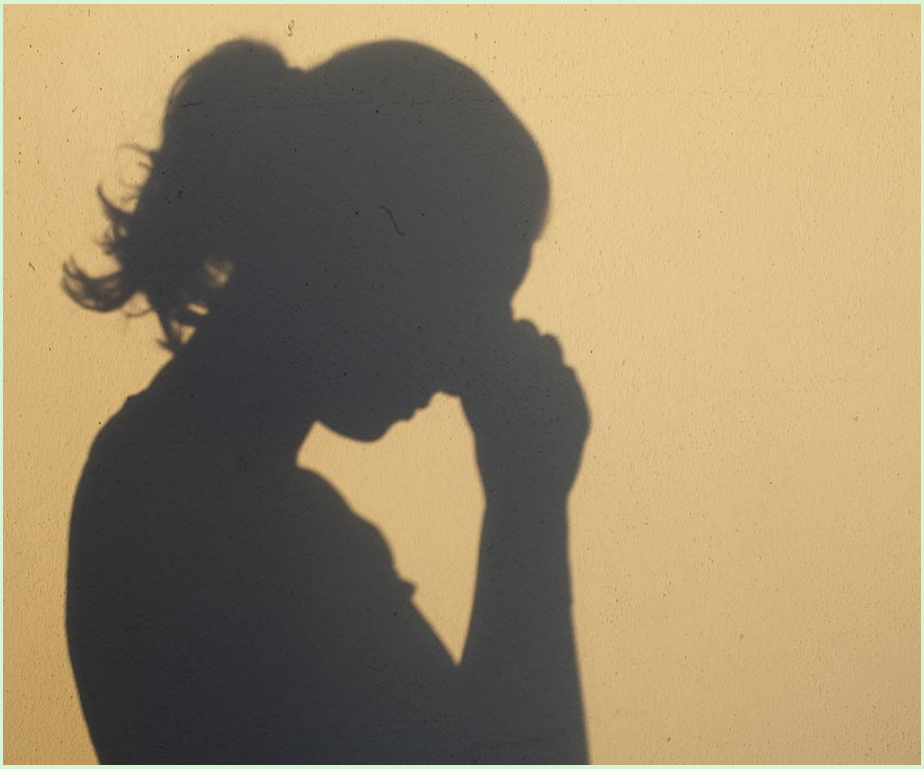

गज या उस से भी छोटे प्लॉट में बना हुआ अधूरा सा मकान था।

एक लगभग साठ साल के किन्तु ढलती उम्र में भी अपेक्षाकृत बलिस्ट से दिखने वाले बुजुर्ग ने दरवाजा खोला। उनकी मूछें गालों तक फैली हुई थीं। मूछों और सर के बालों को खिजाब या काली महंदी से रंगा गया होगा किन्तु समय गुजरने के साथ नीचे से जड़ों में सफ़ेद बाल अधिक झांक रहे थे। उन्होने एक सफ़ेद लूँगी सी बांध राखी थी और ऊपर का बदन नंगा था। पूरा बदन पसीने में भीगे हुए काले सफ़ेद खिचड़ी बालों से भरा हुआ था। उनके चेहरे पर और गोल सी लाल आँखों में एक अजीब प्रकार का न जाने दबंगई का या वहशीपन का सा भाव झलक रहा था।

जतन उनका चेहरा देखकर ही एक पल को सहम सा गया। फिर उसने कुछ साहस सा बटोरकर कहा "जी मैं ... मैं भरतपुर से आया हूँ। मैं ... श्रुति ...।

"अरे सुनती हो। देखो भरतपुर से बहू का कोई रिश्तेदार आया है।" बुजुर्ग, जतन को ऊपर से नीचे तक घूरते हुए दरवाजे से एक ओर हट गए। घर में चारों तरफ अव्यवस्था और विपन्नता का शासन था। आँगन के एक कौने में नल के नीचे झूँटे बर्तनों का ढेर लगा हुआ था। सामने पड़ी खाट पर कपड़ों का ढेर पड़ा था। खाट के बराबर दो पुरानी सी प्लास्टिक की कुर्सी पड़ी हुई थीं। दरवाजों पर पुरानी साड़ियों के मैले से पर्दे टंगे थे।

भरतपुर का नाम सुनते ही, मलीन से सफेद कपड़ों में लिपटी हुई एक नारी छाया घर के किसी भीतर के भाग से बाहर की ओर दौड़ी और घर के गलियारे की दहलीज पर आकर ठिठक गई। उसकी आँखों के नीचे स्याह निशान दिखाई दे रहे थे। उसका तनावयुक्त उदास चेहरा किसी चिरकाल बंदिनी सा गहरी निराशा में डूबा हुआ था। उसका गौरवर्ण उन्नत भाल बिना शृंगार और बिंदी के सूना सूना दिखाई दे रहा था किन्तु चेहरे की मासूमियत से आज भी वो स्कूल की छात्रा सी दिखाई देती थी।

आगंतुक को देखकर उसके चेहरे पर उजाले की एक किरण झलकी और अपने हालात और वातावरण की गंभीरता को देखकर तुरंत गायब हो गई। एक भय और किसी अनहोनी की आशंका से उसका चेहरा पीला सा पड़ गया था।

झुर्रीदार मूछों वाले बूढ़े ने श्रुति को घूरकर देखा और श्रुती नजरें नीची किए वापस मुड़कर घर के भीतर समा गई।

"बैठो नौजवान। अरे कोई पानी लाओ भई। छोरा गर्मी में तपता हुआ आया है।" बुजुर्ग ने एक क्षण के लिए भी जतन के चेहरे से नजरें न हटाते हुए कहा।

एक पीली सी ओढ़नी को सर पर सँवारती हुई एक प्रौढ़ महिला हाथ में पानी का ग्लास लेकर प्रगट हुई और पानी का ग्लास जतन को देते हुए बोली "कूण है रे छोरा। कांई रिश्तेदारी है तेरी बींदनी से। पहले तो ना देखा कभी।"

"जी मैं ... वैसे हम साथ पढ़ते थे। श्रुति की जो माँ है न ... वो ... मैं।" जतन के मुंह से बोल नहीं फूट रहे थे।

"हूँ ... बोल बोल। आगे बोल।" बुजुर्ग ने लगातार जतन के चेहरे पर आँखें गड़ाए हुए कहा।

"हम ... हम पड़ौसी भी हैं और ... श्रुती की माँ जो हैं ... वो मेरी मौसी ...।" उसकी खुश्क जबान में कांटे से उग आए थे और शब्द मानो सूख गए थे। हलक से बाहर नहीं निकल पा रहे थे। दिल ज़ोर ज़ोर से धड़क रहा था।

"हूँ ... ।" बूढ़े ने लंबी हुंकार भरते हुए धीरे धीरे उठते हुए शंका के साथ कहा "अरे कहीं तू वही लफंगा छोरा तो नहीं जिसके साथ हमारी बींदनी शादी से पहले भागने की कोशिश कर रही थी।"

बिना जवाब सुने हुए बूढ़े ने लपक कर जतन के बाल पकड़ लिए और चिल्लाकर कहा "अरे लाठी डंडा लाओ रे कोई। ये बदमाश यहाँ तक पहुँच गया है। हरामखोर जानता नहीं कि हम कौन है। पूरे इलाके की रूह कांपती है हमारा नाम सुनकर। तू आज यहाँ से जिंदा बचकर नहीं जा सकता छोरे।"

श्रुति चीखती हुई जतन की ओर भागी किन्तु उसे किन्ही दो बलिष्ट हाथों ने पकड़कर भीतर घसीट लिए।

"अरे तलवार ला मेरी। आज ये छोरा यहाँ से जिंदा बचाकर नहीं जा सकता। हरामखोर की हिम्मत तो देखो।"

"अरे पागल हो गए हो क्या। घर में ही खून खराबा करोगे। पहले ही पुलिस हमारे पीछे लगी रहती है। एक छोरे को तो गंवा दिया। अब तुम भी जेल में सड़ोगे क्या।" बुढ़िया भीतर से चिल्लाई।

"पर जिंदा तो नई जाण देणा इसे। हमारे घर की इज्जत उछालने की हिम्मत कैसे हुई इस नामाकूल की।"

तभी एक पैंतीस – चालीस साल का आदमी भीतर के कमरे से लाठी लेकर बाहर आया और उस ने जतन को ताबड़तोड़ पीटना शुरू कर दिया। भयानक कोहराम मच गया किन्तु इस वीराने से इलाके में उस चीख पुकार को सुनने वाला कोई नहीं था। जतन को अपनी आँखों के आगे साक्षात मौत दिखाई दे रही थी और वो रहम की भीख मांग रहा था। थोड़ी ही देर में मां बाप के लाड़ प्यार में पला उनका

इकलौता नाजुक सा बेटा जतन जो अधिक प्रहार न सह पाने के कारण, भय और घंटों धूंप में भटकने के कारण लस्त पस्त हो चुका था मूर्छित होकर एक ओर लुड़क गया।

“अरे ... एक काम कर छोरा। रस्सी ला। इसे बांधकर ड़ाल देते हैं। रात को मार कर ‘रण’ में फेंक देंगे। कोई पहचानेगा भी नहीं कि लावारिस लाश किसकी है। और सुण। बीन्दणी पर निगाह रखना। जबान न खोल दे वरना उसे भी ठिकाने लगाना पड़ेगा। अरे आखिर उसका पुराना आसिक है। सांकल तो ठीक से लगा दी थी न कोठरी की। देख कहीं छोरी भाग न जाये।”

“अरे कहाँ भागेगी बाप्पू सा। तीन दिन से तो बुखार में पड़ी है। मर खप जाए तो इसका भरतपुर का मकान बेचकर ...।” बोलते बोलते वो लाठी फेंककर गलियारे की तरफ गया और ज़ोर से चिल्लाया “बीन्दणी भाग गई बापू सा। पीछे का दरवाजा खुला पड़ा है।”

“अरे पकड़ साली को। और सुण। तलवार ले जा। जहां मिले वहीं काट देना। अरे इज्जत की खातिर तो हमारा खानदान ... मर जाएँ या मार दें। जिंदा मत छोड़ना।”

मूर्छित लहुलुहान जतन को वहीं छोड़कर बेटा पीछे के दरवाजे से और बाप आगे में मुख्य द्वार से हाथों में नंगी तलवार लेकर बाहर की ओर भागने लगे।

अंधेरा हो गया था। रेत के टीलों के बीच से गुजरती पतली सड़क पर गश्त करती पुलिस की जीप में बैठे दारोगा ने रात के धुंधलके में एक अजीब नजारा देखा। एक चीखती हुई औरत छोटी सी चट्टान से नीचे सड़क की ओर भागी चली आ रही थी और एक ढलती उम्र का व्यक्ति हाथ में नंगी तलवार लिए तेजी से उसका पीछा कर रहा था।

अचानक श्रुति का पाँव फ़िसला और उसका सर एक पत्थर से टकरा गया। इस से पहले कि नंगी तलवार लिए दानव मूर्छित हो गई श्रुति के निकट पहुँच पाता, एक फायर की आवाज सन्नाटे में गूंज उठी।

अगले दिन श्रुति और तपन ने नागौर के सरकारी हस्पताल में आँखें खोलीं।

तेरह साल का आशू अश्रुपूरित नेत्रों से अपनी मां की ओर देख रहा था। तभी दरवाजे पर आहट हुई और जतन ने प्रवेश किया। आशू भागकर अपने पापा से लिपट गया।

दुनिया के मेले में गाऊँ, हे प्रभु मैं ऐसा व्रत ले लूं ,

इसके पहले सांसें सिमटें, मैं जीवन का अमृत ले लूं ।।

जब कभी निराशा के बादल, अन्तर्मन पर छा जायें तो,

होठों पर प्यास भरे मरुथल , भूले भटके आ जायें तो,

जिम्मेदारी के शिलाखण्ड, जम कर कंधों पर ऐंठे हों,

दुर्गम पथ पर बाधाएं बन, संकट के पहरे बैठे हों ।

इतना धीरज मुझको देना, मैं हंस कर इन सब को झेलूं ।

इसके पहले सांसें सिमटें, मैं जीवन का अमृत ले लूं ।।

जब दुख प्रकटे मन के भीतर, मैं अपने अधरों को सी लूं ,

जब आंसू दृग के द्वार चलें, मैं भीतर ही भीतर पी लूं ।

सुख दुःख तो धूप छांव से हैं, क्या खुश होना क्या घबराना,

जीवन के चंचल सागर में लहरों का आना और जाना ।

तुम बस लहरें गिनते रहना, मैं लहरों पर चढ़ कर खेलूं।

इसके पहले सांसे सिमटें, मैं जीवन का अमृत ले लूं ।।

हूं पथिक, एक अनजान सफर, माया का इन्द्रजाल फैला ,

मन में उपजी इच्छाओं ने कर दिया खूब आंचल मैला।

घिर आई सांझ उदासी ले ,थक गई सांस हारी हारी ,

पर चलना तो मजबूरी है, जब तक छाये ना अंधियारी।

तुम प्राणों को साधे रहना, जब तक मैं ठठरी को ढ़ेलूं ,

इसके पहले सांसे सिमटें, मैं जीवन का अमृत ले लूं ।।

अशोक तिवारी

अपने हाथों...

अपने हाथों सुंदर घर में आग लगाना
मुश्किल है।
और किसी अनजान देश में छाँव बनाना
मुश्किल है।

खेले कूदे जिस मिट्टी में,
गिरते-पड़ते खड़े हुए।
जामुन नीम आम की डाली,
झूल झूलकर बड़े हुए।

महुआ के फूलों की खुश्बू को बिसराना
मुश्किल है।
दूर किसी अनजान देश में छाँव बनाना
मुश्किल है।

नदी किनारे भैंस चराना,
पानी में घुसकर नहलाना।
चढ़कर पीठ कान सहलाना,
पूँछ पकड़ फिर तीरे आना।

लगी बदन में बलुई मिट्टी दूर हटाना
मुश्किल है।
और किसी अनजान देश मे छाँव बनाना
मुश्किल है।

फगुनाये मनुआ की बोली,
जुम्मन के घर खेली होली।
कजराई आँखों की भाषा,
चितवन में रंगोली घोली।

गीत फागुनी हृदय बसाए ठुमरी गाना
मुश्किल है।
और किसी अनजान देश में छाँव बनाना
मुश्किल है।
आसमान हो भले दूसरा,
सूरज चाँद सितारों वाला।
जहाँ रात होती हो दुल्हन,
दिन होता हो तारों वाला।

धरती माँ की गोद छोड़कर आँख लगाना
मुश्किल है।
और किसी अनजान देश में छाँव बनाना
मुश्किल है।

रामानुज अनुज

तुमको शुभकामना...

तुम रुके हो कहाँ ये नहीं जानते लो यहीं से
दिए तुमको शुभकामना।
खुश रहो तुम हमेशा जहाँ भी रहो है हमारी
हृदय से यही कामना।

तुम न आए नजर पर हृदय में रहे,
प्यार के बोल मीठे सुने न कहे।
धड़कनों में अबोली मुलाकात थी,
जिंदगी के लिए यह बड़ी बात थी।

पट हृदय खोल आए न बाहर कभी हो रही
है जगत में समालोचना।
खुश रहो तुम हमेशा जहाँ भी रहो है हमारी
हृदय से यही कामना।

शाम होते ही दीपक जलाए बहुत,
चाँद-तारे गगन जगमगाए बहुत।
लौ इशारे से तुमको बुलाती रही,
काँपती डोलती थरथराती रही।

दुख यही बस हमें तुम रहे सामने पर हुआ न
कभी आमना-सामना।
खुश रहो तुम हमेशा जहाँ भी रहो है हमारी
हृदय से यही कामना।

चाँद उतरा नहीं चाँदनी को लिए,
रात खामोश है बुझ गये हैं दिए।
हो जहाँ भी कहीं एक आवाज दो,
जिंदगी गा उठे कोई सुर-साज दो।

हाथ जोड़े हुये मंदिरों में खड़े कर रहे
देवता से अनुज प्रार्थना।
खुश रहो तुम हमेशा जहाँ भी रहो है हमारी
हृदय से यही कामना।

गंदी लड़की

वंदना अरिमर्दन

सात साल शहर के भीड़ भाड़ वाले इलाक़े के “boys स्कूल “ में पढ़ाने के बाद जब पदोन्नति के साथ मेरा तबादला छोटे से क़स्बे के “girls स्कूल “ में हुआ तो मेरी ख़ुशी का ठिकाना नहीं रहा। मेरा मानना है कि उधमी लड़कों को पढ़ाने की क़वायद से कहीं अधिक आसान है सीधी सादी लड़कियों को पढ़ाना। मैं ये सोच सोच कर ख़ुश था कि -‘मज़े से ज़िंदगी कटेगी अब।
शान्ति से जीवन चलेगा।
बस, जाओ। पढ़ाओ। और आ जाओ।
वाह’

और केवल एक महीने में ही “राजकुमारी कन्या पाठशाला “ में अपनी पकड़ बना ली थी मैंने।

पर न जाने क्यों स्कूल की शान्ति में मुझे कुछ डर का सा, कुछ दहशत का सा माहौल नज़र आता ।लड़कियों की बाल सुलभ चहक यहाँ ग़ायब थी। कुछ ठंडा सा , कुछ वीरान सा माहौल था यहाँ। लेकिन क्यों ? कुछ समझ न आता ।

एक दिन “आठवीं A “ के क्लासरूम से शोर की आवाज़ सुनाई देने लगी।
ये मेरे लिए अजूबे से कम न था। मैं उस ओर तेज़ कदमों से चल दिया। मुझे कक्षा की ओर जाते देख एक अध्यापिका जो उस कक्षा को पढ़ाती थीं वो तेज़ी से , लगभग भागती हुई मेरे पास आयीं और बोलीं
“ मिस्टर शर्मा , you are new to this school . I insist आप वहाँ न जाएँ। I know these children. बच्चे हैं।थोड़ा बहुत शोर गुल तो होगा ही।”

मैं हैरान था।मुझे वहाँ जाने से रोकने का क्या अर्थ ? अध्यापिका के साधारण से दिखने वाले शब्दों और उनके चेहरे के तीखे हाव भावों में कोई मेल न था। उनको परेशान देख कर मैंने कहा
“ don't worry, Mrs. अस्थाना, मैं उन्हें डाँटूँगा नहीं, but please! let me see.”
और उनकी इच्छा के विपरीत मैं क्लास की ओर चल दिया।

क्लास में जाते ही मैंने देखा चार पाँच लड़कियां मिलकर एक लड़की को पीट रहीं हैं । मुझे देखते ही लड़कियाँ एकदम से अलग हुईं पर समवेत स्वर में बोल पड़ीं -
सर यह लड़की बहुत गंदी है।

हाँ sir! बहुत ख़राब है !
हमारा खाना चुराकर खा जाती है।

sir पैसे भी चुरा लेती है।

हाँ sir!इसके मम्मीपापा भी चोर थे ।ये भी चोर है सर ! चोर।”

वो लड़की एकदम मुझसे लिपट गयी जैसे चूज़ा चिड़िया के पंख में छुपना चाह रहा हो। वो रोते रोते बोली - “पापा मुझे बचा लो। पापा पापा”

वो सुबकने लगी।
पापा ? हा हा हा ! वो पाँचों लड़कियाँ क्रूर हँसी हँसने लगीं। उस लड़की को अपनी ग़लती का अहसास हुआ। वो अचकचा कर हकलाई - ओ हाँ ! sir sir ..
sir मुझे बचा लो ..

उस लड़की ने मुझे नहीं छोड़ा।

मैंने महसूस किया कि मासूम से चेहरे वाली वो बच्ची मुझमें अपना पिता ढूँढ रही है ।मैंने उसका सर सहलाते हुए बाक़ी लड़कियों से थोड़े शुष्क स्वर में पूछा - “बताओ किसका खाना खाया इसने?”
“मेरा “ पाँचों लड़कियाँ एक साथ बोलीं।

“इसने सबका खाना खा लिया ?”

अब सब चुप थीं। मैं समझ गया कही कुछ तो गड़बड़ है। अब बात की तह में जाना ज़रूरी था।
मैं उस लड़की को अपने कैबिन में ले गया। मैं जाते हुए देख रहा था कि सारी अध्यापिकाएँ मुझे अटपटी निगाह से देख रहीं थी।
दाल में कुछ काला होने का मेरा अहसास और बढ़ गया।
अपने कैबिन में मैंने उसे अपनी कुर्सी पर बैठाया और मैं ख़ुद मेज़ पर बैठ गया।उसे पानी दिया।
मैं मेज़ पर बैठा-बैठा उसे देख रहा था।पानी पीते पीते वो हिचकियाँ लेती जा रही थी। मैंने प्यार से पूछा - " बेटा तुम्हारा नाम क्या है ?"
"रूपा ! परSir मैंने उनका खाना नहीं खाया। मैं बस शाम को खाती हूँ जब अस्थाना Mam देती हैं।"

"क्या??? ये कैसा गोरखधंधा है ?"मुझे कुछ समझ न आया।
मैंने अपना टिफ़िन खोला और उसे अपना खाना दिया।
" लो पहले खाना खाओ!"
"नहीं sir! आप?"
"अच्छा लो हम भी खाए लेते हैं!"
मैंने एक रोटी पर ही सब्ज़ी लेकर खाना शुरू कर दिया। रूपा थोड़ा सा comfortable हो गयी। मैंने कहा
"लो अब तुम भी खाओ!"
मैंने देखा वो भुक्कडों की तरह खाने पर टूट पड़ी।
मैं समझ गया इसने खाना तो नहीं ही चुराया।पर लड़कियाँ इसे पीट क्यों रही थीं? अजब पहेली थी ?

मैंने देखा थोड़ी ही देर में वो नन्ही चिड़िया मुझसे ऐसे खुल गयी जैसे अपने चिर परिचित घोंसले में सुरक्षित बैठी हो।उसका ये निश्चिंत भाव मैंने किसी अध्यापिका के साथ न देखा था। और मैं तो इस विद्यालय में नया नया ही था। इस स्कूल की हर बात बहुत रहस्यमयी थी।
मैंने रूपा को अब काफ़ी सहज पाया तो पूछा - "क्या बात है रूपा ? कुछ परेशानी है तो मुझे बताओ।"
मेरा अपनत्व उस बालमन ने बड़ी सरलता से स्वीकार कर लिया था। रूपा धारा प्रवाह बोलने लगी -
sir! हमारे स्कूल से हर हफ़्ते एक अच्छी बच्ची को चुना जाता है।

अच्छी बच्ची को चुना जाता है ? मैं सोच में पड़ गया। इस प्रकार की किसी साप्ताहिक गतिविधि की मुझे जानकारी नहीं थी। मैंने रूपा से पूछा -
"अच्छा ? कौन चुनता है ? और क्यों चुनता है ?"
रूपा ने बेहद सरलता से बताया -
sir! अस्थाना मैम चुनती हैं अच्छी लड़की। जिसे चोकलेट , नई फ़्रॉक और बर्गर देने के लिए ले जाते हैं।लेकिन sir हर लड़की रोते हुए और दर्द से कराहती हुई आती है। मुझे उन्हें देख कर डर लगता है।वो कुछ नहीं बतातीं। शायद उन्हें ख़राब चौकलेट दे देते हैं। मेरी दो सहेलियों ने तो उसके बाद स्कूल ही छोड़ दिया।एक बार मुझे भी चुना था। उस दिन मेरे पापा ने मेरा स्कूल से नाम कटा दिया था। अस्थाना mam ने मुझे फिर स्कूल में लिया है "

"तुम्हारे पापा ने तुम्हें आने दिया ?"कुछ समझने की कोशिश करते हुए मैंने पूछा।

रूपा की आँखें फिर से आँसू बहाने लगीं।वो रोते-रोते, बिना क्रम के असम्बद्ध तरीक़े से जल्दी जल्दी बोलने लगी -
"sir!sirपुलिस ने मेरे पापा को पकड़ा था ! इतने सारे ! तीन हज़ार रुपए। वो कहते हैं पापा के तकिए में थे। मम्मी पापा दोनो ने आत्महत्या कर ली। वो कहते हैं पापा ने चोरी की है।
मम्मी झाड़ूँ पोंछा का काम करती थीं। पापा को बहुत पीटा था। sir! मेरे ...मेरे पापा ने चोरी नहीं की थी। सब लोग झूठ बोलते हैं। मेरी बात कोई नहीं मानता।उनपर चोरी का झूठा इल्ज़ाम था। (सिसकियाँ) मैं सच कहती हूँ sir! वो चोर नहीं थे .. पापा ने मुझसे कहा था तुम लालच में मत आना ...किसी से कुछ मत लेना ...वो दोनो पंखे से लटक गए थे ..."

रूपा बहुत देर तक रोती रही मैं कुछ न बोला बस उसका सर सहलाता रहा और उसके बेतरतीब वाक्यों को एक सूत्र में पिरोने की कोशिश करता रहा। थोड़ी देर बाद रूपा संभली। मगर उसके अस्फुट शब्दों में से एक ख़तरनाक कथानक लिए महाकाव्य झलक रहा था।रूपा खोई खोई सी बुड़बुड़ाने लगी - "आत्महत्या। काला पंखा है।पुलिस के पास है। अभी मुझे वापस नहीं मिला है।अब तो ख़राब हो गया होगा।अस्थाना मैम मुझे दिलाएँगी। मैं अकेली रह गयी थी .... तब अस्थाना मैम मुझे फिर से स्कूल में लाईं।मेरी फ़ीस माफ़ करवाई।बस मुझे अस्थाना मैम का घर का काम करना होता है।वो मुझे रोज़ रात को खाना भी देतीं हैं। आधा खाना मैं रात को खाती हूँ आधा सुबह। वो कहती हैं अगर मैं चोकलेट लेने चली जाऊँगी तो मुझे रोज़ दो बार खाना मिलेगा ...पर मैं नहीं जाऊँगी .... पापा ने मना किया था ....sir ये लड़कियाँ अस्थाना मैम के कहने पर मुझे रोज़ पीटती हैं कि मैं चाकलेट लेने जाऊँ ... मैं नहीं जाऊँगी ,मैं नहीं जाऊँगी …"

रूपा अब भी सुबक रही थी। मैंने उसे ढाढ़स बँधाया। और कहा- "रूपा ! न बेटा न ! मैं हूँ न ! अब डरने की कोई बात नहीं !और चाहो तो तुम मुझे पापा कह सकती हो।"
"ओह पापा! पापा " चूज़ा फिर से मेरे सीने से चिपक गया।

"आठवीं का बच्चा और ऐसी बेरहम ज़िंदगी ???? मेरी बेटी दिव्या और इसमें क्या फ़र्क़ है ?दोनो ही आठवीं क्लास में।एक सा ही भोलापन। लेकिन रूपा ? साँपों के बिल में अकेला चूज़ा"

मैं उसे अपने घर ले आया। Mrs अस्थाना कुछ न कह सकीं। कोई भी कुछ कह न सका।रूपा को मेरे घर में एक सामान्य सा माहौल मिला तो वो मुस्कुराना जल्दी ही सीख गयी।मेरी बेटी को घर में एक सहेली मिल गयी थी। दोनों पहले ही दिन से घुल मिल गयीं।10 दिन इसी तरह बीत गए। रूपा मेरे साथ आती मेरे साथ जाती।

लेकिन मामले की तफ़्तीश अभी बाक़ी थी। मैंने पत्नी से काफ़ी विमर्श किया और फिर एक दिन 100 नम्बर पर कॉल कर ही लिया।पुलिस

अधिकारी आया।
आते ही उसने काइयाँ और फुसफुसाते स्वर में कहा - जैसे कि कोई राज़ खोल रहा हो -
“सर जी ! आप फँस जायेंगे।हाँ! शरीफ़ आदमी हो इसलिए आगाह कर रहा हूँ।
ये स्कूल ? क्या बताऊँ ? कान लाइए इधर …
हाँ ! Sir जी !! इस स्कूल के ट्रस्टी आवारा,गुण्डे,धंधे वाले लोग हैं।
पिछले दो प्रिंसिपल तो उन्होंने झूठ बोलकर फँसवा दिये थे ।बेचारे चार महीने जेल में बंद रहे और अब सस्पैंड हैं ।अब इस लड़की रूपा को ही लो ।इस के माँ बाप भी जान गँवा बैठे हैं।हाँ. और sir! आप काहे पचड़े में पड़ते हैं !
ये रूपा भी गंदी है !
गंदी समझते हैं न आप ??
हाँऽऽ”
तो श…चुप्प करके कट लो ! फ़्री की सलाह दे रहा हूँ। शरीफ़ आदमी हो इसलिए। वरना फ़्री में हमसे कोई कुछ करा तो ले … ह ह ह ह

मैंने महाशय से पूछा - “अच्छा अच्छातो अब मैं क्या करूँ ? “
वो आँख मार कर बोला - “अरे उस लड़की को अपने घर से निकाल बाहर करो ।और क्या ? बस क़िस्सा ख़त्म।भई आपको और आपके बीवी बच्चों को भी तो शान्ति से जीना है !! क्यों जी ? नहीं ? “

मैंने कहा -“ठीक है ठीक है ।मैं समझ गया ।”

पर सच कहूँ तो मैं भी डर ही तो गया था।
सुकून की तलाश में यहाँ आया था। और एक बला मोल ले ली थी।

मैं सोच रहा था - “रूपा को अब मैं अपने घर नहीं रखूँगा। मुझे अपनी बेटी का भविष्य दांव पर नहीं लगाना चाहिए। पर वो कितनी मासूम और भोली है। मुझे कितने प्यार से पापा कह रही थी।मैं क्या करूँ। पुलिसकर्मी की धमकी मुझे पलायन के लिए उकसा रही थी !”

मैंने मन ही मन कुछ ठान लिया ।स्कूल के काले कारनामों की खबर अख़बार में दे दी।
बस एक धमाका सा हो गया।बाक़ी काम 3 महीने के भीतर ही, मीडिया और शक्तिशाली वर्ग ने कर लिया। ट्रस्टी लॉक अप में है।
धंधे करवाने वाले गैंग को पुलिस के बड़े अधिकारी ढूँढ़ रहे हैं।
सिपाही जी अंदर हैं ।स्कूल की आड़ में अवैध धंधा चल रहा था।एक बड़े सकैंडल का खुलासा करने पर मेरी भी समय से पूर्व एक और पदोन्नति हो गयी।साथ ही ‘जागरूक नागरिक’पुरस्कार से मुझे सम्मानित भी किया गया।
स्कूल बंद कर दिया गया।इस स्कूल की सारी लड़कियों को सरकारी स्कूल में भर्ती कर दिया गया।
सब कुछ ठीक ही हो गया।
पर सुबकती गंदी लड़की ?
रूपा ?
वो नन्हा चूज़ा ?
उसका क्या हुआ ?
जानना नहीं चाहेंगे ?
अभी अभी खबर लगी है कि किसी माननीय NGO ने शिक्षा मंत्री जी से शिकायत कर दी है कि लड़की की स्वतंत्रता का हनन हो रहा है उसे मेरे घर से हटाया जाए।
और उसे नारी निकेतन में जगह दी जाये। रूपा के हितैषी की अपील पर
एक बार फिर रूपा का नन्हा घोंसला तोड़ा जा रहा था। एक बार फिर मैं उसके सामने था।एक बार फिर उसकी भोली मासूम आँखे मुझ से प्रश्न कर रही थीं।
नारी निकेतन से ख़बर मिल चुकी थी कि वहाँ तो मिसेज़ अस्थाना को प्रोमोशन करके भेजा जा चुका है ---------।
ओह रूपा ! मेरे बच्चे !!! मैं,एक पुरुष हृदय, अनजाने ही माँ हुआ जाता था।
पर सच तो ये है कि मैं असहाय ही रहा।
आज दोपहर को वो हुआ जो मैं हरगिज़ नहीं चाहता था ।पुलिस की वैन में रूपा बैठी हुई थी जो उसे नारी निकेतन ले जाने के लिए आई थी। प्रेस वाले और फोटोग्राफ़र मुझे और रूपा को कैमरे में क़ैद किए जा रहे थे।
निर्दोष रूपा को एक साथ दो-दो कारावास?
रूपा भरी आँखों से मुझे देख रही थी। मानो कह रही हो -
पापा मैं चोकलेट खाने नहीं जाना चाहती।
मुझे अच्छी लड़की नहीं बनना।पर मैं गंदी लड़की नहीं हूँ पापा। मुझे बचा लो पापा।
मुझे बचा लो।
मैंने आँखे फेर लीं।
और मैंने तुरंत अपना तबादला पिछले, पुराने स्कूल में ले लिया।मैं ये सोच सोच कर ख़ुश होना चाहता था कि -‘मज़े से ज़िंदगी कटेगी अब।
शान्ति से जीवन चलेगा।
बस, जाओ। पढ़ाओ। और आ जाओ।
वाह’

अब मैं फिर से शहर के boysस्कूल में पढ़ाया करता हूँ।
अब मैं गंदी लड़की को भुलाने की पूरी कोशिश कर रहा हूँ। पर उस मासूम चेहरे को भुला नहीं पा रहा हूँ।
मेरी बेटी दिव्या और रूपा का चेहरा बार बार गड्डमड्ड होता रहता है। क्या रूपा , जो एक बेटी भी है , उसे किसी की भी ममता का अधिकार नहीं ??? मैं सोते सोते उठ जाता हूँ।मैं ख़ुश होना चाहता हूँ ।ख़ुश रहना चाहता हूँ।

आज 6 महीने बाद।एक स्वर कान में गूंजता है ।ये मेरी बेटी दिव्या थी -पापा ! देखो स्कूल में रूपा ने फिर मुझे रेस में हरा दिया। मैं नहीं खेलूँगी इसके साथ। रूठकर दिव्या मुझसे लिपट गयी। अब रूपा बोल उठी - और पापा दिव्या भी तो मुझे maths में रोज़ हराती है , उसका क्या ? ये कहकर वो मेरी पीठ से लिपट गयी।

अब मेरी गोद ली बेटी रूपा दिव्या के ही स्कूल में पढ़ती है ।दो बेटियों से घर में रौनक़ बनी रहती है। मैं दोनो को बाहों के घोंसले में छुपा लेता हूँ,और प्यार से दोनो के गाल पर एक एक चपत लगाता हूँ।मुँह से अनायास निकलता है -

“हप्प्प!! गंदी लड़कियों”
दोनो देर तक निश्छल हँसी हंसती रहती हैं।

लेख में व्यक्त विचार लेखक के हैं उनसे संपादक मण्डल या संपर्क भाषा भारती पत्रिका का सहमत होना आवश्यक नहीं है। किसी भी विवाद की स्थिति में न्याय-क्षेत्र नई दिल्ली रहेगा। प्रकाशक : सुधेन्दु ओझा, 97, सुंदर ब्लॉक, शकरपुर, दिल्ली-110092

गीतकार ग़ज़लकार राजेन्द्र स्वर्णकार पर जर्मनी में बनेगी डॉक्युमेंटरी फ़िल्म

और प्रकाशित होगी शोधपरक पुस्तक

छंदकाव्य में अपनी विशिष्ट छवि और अपनी मौलिक धुनों में सस्वर काव्यपाठ के लिए विख्यात एवं लोकप्रिय, मीठे गले के छंदज्ञ गीतकार ग़ज़लकार कवि राजेन्द्र स्वर्णकार पर जर्मनी में बनेगी डॉक्युमेंटरी फ़िल्म। साथ ही प्रकाशित होगी शोधपरक पुस्तक।

अब तक लगभग तीन हज़ार गीत ग़ज़ल छंदों के रचयिता और लगभग दो सौ से अधिक मौलिक धुनें बनाने वाले, हिंदी राजस्थानी उर्दू के काव्यसृजक, विनम्रता की प्रतिमूर्ति श्री राजेन्द्र स्वर्णकार एक बहुआयामी कलासाधक सृजक सरस्वतीआराधक हैं।

उनके काव्य वैशिष्ट्य को पहचानते हुए 'संस्कार भारती' के संस्थापक संचालक बाबा योगेन्द्रजी ने बहुत वर्ष पूर्व बीकानेर आने पर 'बीकानेर संस्कार भारती' का स्थायी साहित्य प्रभारी बनाया था। आपको 'राष्ट्रीय कवि संगम' और साहित्यिक सामाजिक सांस्कृतिक संस्था 'समन्वय' ने भी बीकानेर जिलाध्यक्ष पद पर मनोनीत किया था। लेकिन कला साहित्य एवं साधना को ही समर्पित श्री स्वर्णकार ने इन सब पदों से स्वयं को मुक्त करते हुए सृजन के लिए ही स्वयं को समर्पित रखने को प्राथमिकता देना उचित समझा।

विविध छंदों में काव्यसृजन में सिद्धहस्त स्वर्णकार की प्रतिभा को देश के शीर्षस्थ कवियों ने सराहा है। आपकी अब तक दो काव्य पुस्तकें प्रकाशित हैं, जबकि पांच-सात पुस्तकें प्रकाशनार्थ तैयार हैं।

श्री स्वर्णकार को पच्चीस वर्षों से आकाशवाणी दूरदर्शन सहित पचासों शहरों कस्बों में कवि सम्मेलनों में ससम्मान काव्यपाठ के लिए आमंत्रित किया जाता रहा है। आपको राजस्थान की चार चार भाषाओं (हिंदी राजस्थानी ब्रज और उर्दू) की अकादमियों के कवि सम्मेलनों और मुशायरों में काव्यपाठ करने का गौरव प्राप्त है।

इस प्रकार बहुमुखी प्रतिभा के धनी श्री स्वर्णकार कोई ढाई दशक से अपनी काव्य प्रतिभा का लोहा मनवाते आए हैं।

श्री स्वर्णकार को काव्यपाठ के लिए अनजान अपरिचित लोगों द्वारा जगह जगह ससम्मान प्रायः बुलाया जाता रहा है। देश विदेश से प्रकाशित अनेक महत्वपूर्ण संकलनों में राजेन्द्र स्वर्णकार का परिचय और रचनाएं संकलित हैं।

वर्ष 2010-11 में आपको 'परिकल्पना ब्लॉगोत्सव' द्वारा 'वर्ष का सर्वश्रेष्ठ गीतकार गायक' पुरस्कार प्रदान किया गया था।

अमरीका और कनाडा की संस्था 'रक्षक फाउंडेशन' द्वारा आयोजित 'गौरव गाथा काव्य प्रतियोगिता' में आपको दो बार प्रथम और द्वितीय स्थान प्राप्त करने के लिए नगद पुरस्कार से सम्मानित किया गया। अंतर्जाल की छोटी मोटी अनेक काव्यस्पर्धाओं में आपने असंख्य बार अपनी काव्य प्रतिभा मनवाई है।

स्वर्णकार के लिखे छंद और गीत कोई डेढ़ दशक पहले से ही डॉक्यूमेंट्री फिल्म और एलबम में भी अपना कमाल दिखाते रहे हैं। मुंबई के निर्माता-निर्देशकों की विविध विषयों पर बनी लघुफ़िल्मों डॉक्यूमेंट्रीज में स्वर्णकार की काव्य पंक्तियां सम्मिलित होती रही हैं। चुटकियों में किसी भी छंद, किसी भी काव्य रचना के लिए विशिष्ट मौलिक धुन बना देने वाले राजेन्द्र स्वर्णकार जी ने कहीं से संगीत की शिक्षा नहीं ली है। अनेक अवसरों पर एक-दो घंटे से ले'कर डेढ़ मिनट के अंदर अंदर पहली बार रचना पढ़ने पर भी उसकी धुन बना कर प्रस्तुति देने का चमत्कार स्वर्णकार ने कई बार किया है। आपकी मौलिक धुनें इतनी हृदयग्राही होती हैं कि आम श्रोता जहां मुग्ध हो जाते हैं, वहीं कविता सीखने में लगे नौसिखिए कवयित्री कवि अक्सर इनकी धुनों की नकल करके वाहवाही बटोरने का प्रयास करते हुए भी पाए जाते हैं। पिछले बाइस चौबीस वर्षों में देश विदेश और स्थानीय पचासों रचनाकारों की रचनाओं की धुनें बना कर प्रस्तुति देने का अद्भुत कार्य करते रहने वाले स्वर्णकार की अपनी बनाई हुई दो सौ से अधिक कंपोज़ीशन हैं।

ऐसी विशिष्ट प्रतिभा को मुंबई के एक लघुफ़िल्म निर्माता निर्देशक ने इसी वर्ष होली से एक दिन पूर्व उपहार में एक शानदार हारमोनियम भिजवा कर सम्मानित किया है।राजेन्द्र स्वर्णकार का एक अन्य महत्वपूर्ण कार्य है डीएक्सिंग और शॉर्टवेव लिसनिंग (DXing & Short Wave Listening) जो एक शौक़ से शुरू हो'कर उपलब्धियों के शीर्ष बिंदु तक पहुंचा।

30-35 वर्ष पूर्व अस्सी के दशक में स्वर्णकार ने सक्रिय शॉर्टवेव लिसनर डीएक्सर के रूप में ब्रिटेन अमरीका पश्चिमी जर्मनी पूर्वी जर्मनी चाइना जापान मिश्र नीदरलैंड आस्ट्रेलिया चकोस्लोवाकिया एकीकृत सोवियतसंघ सहित रूस उज़्बेकिस्तान आदि देशों के प्रसारण केंद्रों द्वारा आयोजित विभिन्न पत्रलेखन, संगीत, चित्रकला, और निबंध प्रतियोगिताओं में लगभग सौ बार पुरस्कार जीत कर बीकानेर एवं राजस्थान का गौरव बढ़ाया है।

जर्मनी के पुनर्एकीकरण के अवसर पर डॉयट्शे वैले द्वारा 'पुनर्एकीकृत जर्मनी से प्रत्याशाएं' विषय पर हिंदी उर्दू बांग्ला नेपाली चाइनीज़ अंग्रेजी और जर्मन भाषाओं के प्रतिभागियों के लिए आयोजित निबंध प्रतियोगिता में श्री राजेन्द्र स्वर्णकार द्वारा हिंदी भाषा में लिखित निबंध ने एशिया भर के 523 प्रतिभागियों में प्रथम स्थान प्राप्त किया था।

आपकी प्रतिभा से प्रभावित हो'कर कई अन्य शहरों के अनजान अपरिचित लोग और स्थानीय लोग भी आपसे मिलने आपके घर आते रहे हैं।

इनमें रेलवे में वरिष्ठ डॉक्टर दिल्ली की डॉ.आशा शेटी और भारतीय सेना में वरिष्ठ अधिकारी कंवल शेटी के पत्र की पंक्तियों का उल्लेख करना रोचक होगा। उन्होंने

लिखा कि - "हमने सुना था कि राजस्थान में रेत ही रेत होती है। लेकिन रेत में हीरे भी होते हैं यह हमें जर्मनी में पता चला।"

यह पत्र उन्होंने डॉयट्शे वैले, पश्चिम जर्मन प्रसारण केंद्र में कार्यरत अपनी पुत्री से मिलने के लिए डॉयट्शे वैले स्टूडियो जा कर स्वर्णकार के अनेक पुरस्कृत पत्रों का अवलोकन करने के पश्चात प्रभावित हो'कर लिखा था। कुछ समय बाद भारत लौटने पर वे स्वर्णकार जी से मिलने बीकानेर आए, और दो दिन इनके परिवार के साथ ही रहे।

इसी प्रकार वर्ष 2000 में होली से दो दिन पूर्व स्वर्णकारजी से मिलने पुनर्एकीकृत जर्मनी से जर्मन लेडी सबीने इमहोफ आई थी, जो विभाजित जर्मनी के प्रसारण केंद्र रेडियो बर्लिन इंटरनेशनल, पूर्वी जर्मनी की हेड थी। ध्यातव्य है कि, 1990 में जर्मनी का पुनर्एकीकरण होने के बाद रेडियो बर्लिन का प्रसारण बंद कर दिया गया था। प्रसारण बंद होने के दस वर्ष बाद, सारे संपर्क समाप्त हो जाने के बाद, श्रीमती सबीने इमहोफ भारत आईं तो बिना पूर्व सूचना ही दिल्ली की एक टूरिस्ट कंपनी से गाड़ी और दुभाषिया ले'कर होली से दो दिन पहले एक भोर को सात बजे अचानक, बीकानेर श्री राजेन्द्र स्वर्णकार के घर पहुंच गईं, और दो दिन रह कर उनके बारे में अधिक जानकारी संकलित की।

आपने अपने जीवन के यादगार संस्मरणों में राजेन्द्र स्वर्णकार और उनकी बहुआयामी प्रतिभा का विशेष उल्लेख किया है।

और अब...

बीस बाईस वर्ष बाद...

बेल्जियम निवासी भारतीय मूल की जर्मनी में शोधकर्त्री आनंदिता जी ने जब सबीने जी के कार्य के माध्यम से श्री स्वर्णकार के बारे में जाना तो सही मोबाइल नंबर ज्ञात नहीं होने के उपरांत गूगल सर्च द्वारा सही संपर्क सूत्र जुटा कर वे मिलने को उद्यत हुईं, और अमेरिका में कार्यरत अपने सहयोगी केरल के ज्योतिदास के साथ बीकानेर चली आईं।आप दोनों ने स्वर्णकार जी के घर पर लगातार तीन दिन पांच-पांच सात-सात घंटे की विस्तृत सिटिंग करके अपनी उत्सुकता जिज्ञासा भरे शोध कार्य के लिए ऑडियो-वीडियो रिकॉर्डिंग करते हुए साक्षात्कार किया, जिसमें विश्व भर से कोई चालीस पचास प्रसारण केंद्रों पर श्री स्वर्णकार द्वारा लगभग सौ बार प्राप्त पुरस्कारों के छायांकन से लेकर उनके काव्य कर्म चित्रकारी गायन और संगीत से संबंधित विविध पक्षों पर बातचीत की। साक्षात्कारकर्ता और साक्षात्कारदाता दोनों को थका देने वाले इस कार्य को लगभग सत्तर-अस्सी प्रतिशत ही पूर्ण किया जा सका तीन दिन में। कुछ महत्वपूर्ण कार्य अब वीडियो चैटिंग और मेल द्वारा संपन्न होगा। ततपश्चात जर्मनी में एडिटिंग के पश्चात यह साक्षात्कार डॉक्युमेंटरी और पुस्तक रूप में सबके लिए सार्वजनिक किया जाएगा।

विविध प्रतिभाओं के धनी इस मौनसाधक बहुआयामी कलाकार को हृदय की गहराइयों से नमन एवं सुखद जीवन और सफलताओं के लिए मंगलकामनाएं

मूल आदमी और क्लोन

पूरी तैयारी के साथ
मैं सब कुछ कहता हूं
इसके बाद भी बहुत कुछ बचा रहता है
और ये जो बचा रहता है
दरअसल मैं वही कहना चाहता हूं

प्रेम में ,
मैं कहना चाहता हूं प्रेम,
पर प्रेम को छोड़
सब कुछ कह जाता हूं

ऐसे ही क्रोध में भी
नहीं चढ़ा पाता सही ढंग से भृकुटियां
जैसें चढ़ाते होंगें ऋषि दुर्वासा श्राप देने से पहले

और जो नहीं कह पाता हूं
दरअसल मैं वही हूं
वही मेरी आत्मा है
बाकी सब मेरे क्लोन है

जब तुम कहती हो
बहुत प्रेम है तुमसे
तब मैं द्वंध में पड़ जाता हूं
ये तुम ही कह रही हो
या तुम्हारा कोई क्लोन

ठीक ऐसा ही कुछ
अपने इर्द-गिर्द भी देखता हूं
लोग कह कुछ रहें हैं
कर कुछ रहें हैं
देख कुछ रहे है
दिखा कुछ रहे है

घर में मालिक वाला क्लोन
समाज के सामने ज्ञानी का
एकांत में भोगी का...

अगर आप ध्यान देंगे
तो हर तरफ क्लोन ही क्लोन है
मूल इंसान तो कब का मर चुका है

एक एक आदमी ने
इतने क्लोन बना रखें हैं
कि समाज से मूल आदमी
कब और कैसे गायब हुआ
शोध का विषय हो सकता है
मानवशास्त्र के लिए

और आश्चर्य मत करना
आगर आने वाले दिनों में
इस पर कोई पीएचडी करता दिखे

हर तरफ ट्रेनिंग सेंटर खुले है
पैदा होते ही बच्चों के क्लोन बनाने के
ताकि मूल आत्मा से
दूर किया जा सके बच्चों को

और अगर थोड़ी बहुत आत्मा बची भी
तो उसे स्कूल समाज और संस्थान पूरी कर देते हैं

हम बड़े गर्व से तैयार कर रहे हैं
एक हृदयहीन संवेदनहीन मशीनी
एवं तथाकथित प्रगतिशील मानव क्लोन
जिसकी उत्पादकता बेहतरीन है

होनी भी चाहिए
क्योंकि उत्पादकता ही
आज के समाज राष्ट्र और विश्व में
प्रगति का सूचकांक है

आदमी गर्वोक्ति मुस्कान और
चमकती आंखों से बताता है
देखो मेरा क्लोन तुम्हारे क्लोन से अच्छा है

इसमें कोई आश्चर्य नहीं
कि आने वाले वक्त में
परिवार और समाज की अवधारणा
सिर्फ किताबों में इतिहास के रुप में बताई जायें
और प्रेम को दर्जा दे दिया जाये
ख़तरनाक मानसिक बीमारी का

मूल आदमी के बारे में लोग सोचकर
अविश्वास और शर्म करें
कि उनका एक पुराना वर्जन ऐसा भी था

जिसे किताबों में
मूल आदमी के नाम से जाना जाता है

राजेश सिंह

योगेश्वर का योग संदेश

मैं श्री कृष्ण हूं।
मेरा संपूर्ण जीवन ही योग का संदेश है।
मैं योग का संदेश सुनाता हूं,
इसलिए मैं योगेश्वर कहलाता हूं...

मेरा संपूर्ण जीवन
सम-विषम परिस्थितियों में ही बीता,
फिर भी मैंने अपने चेहरे पर
हंसी की रेखाओं को गायब नहीं होने दिया,
क्योंकि मैं योगेश्वर हूं।
मैं योग का संदेश सुनाता हूं,
इसलिए मैं योगेश्वर कहलाता हूं...

जन्म के साथ ही बच्चे का
जन्म देनेवाली माता से अलग हो जाना
कोई सामान्य दुःख नहीं।
मैंने अपनी जन्मदात्री माता
देवकी के बिछोह को सहा।
फ़िर भी पालक माता यशोदा की गोद में
हंसते-खेलते बड़ा हो गया।
मेरे पास समता को धारण किए बिना
और कोई विकल्प ही नहीं था।
इसलिए परिस्थिति को अपना लिया और
उसके साथ सायुज्य स्थापित कर लिया।
यही है योग।
मैं योग का संदेश सुनाता हूं,
इसलिए मैं योगेश्वर कहलाता हूं...

मामा कंस ने मुझे मारने के लिए
राक्षसी पूतना को भेजा।
मैंने अपनी शक्ति से
राक्षसी पूतना को भेदा।
बचपन के खेलने, गाने, झूमने और
नाचने के किसी मौके को ना छोड़ा।
किसी भी विषम परिस्थिति को
अपने ऊपर हावी होने ना दिया।
हमेशा खुश मिजाज़ ही रहा।
जिंदगी का आनंद उठाता रहा
और ब्रज वासियों को आनंद कराता रहा।
यही है योग।
मैं योग का संदेश सुनाता हूं,
इसलिए मैं योगेश्वर कहलाता हूं।

धर्म की रक्षा करने हेतु
अधर्मी, अन्यायी और दुराचारी
मामा कंस का मुझे वध करना पड़ा,
किंतु मैंने मन को विक्षुब्ध नहीं होने दिया।
अपने मन की वृत्तियों पर पूरा नियंत्रण रखकर
धर्म की रक्षा करने का अपना लक्ष्य पूरा किया।
सुख-दुख, हर्ष-विषाद और प्रेम-घृणा के
कुचक्र में मैं नहीं फंसा।
मैंने स्थितप्रज्ञत हो जाना ही उचित समझा।
यही है योग।
मैं योग का संदेश सुनाता हूं,
इसलिए योगेश्वर कह लाता हूं।

ब्रज में भयानक बाढ़ ने
पूरे ब्रज को घेर लिया।
मैंने ब्रजवासियों को बचाने के लिए
गोवर्धन पर्वत को अपनी ऊंगली पर
धारण कर लिया।
मैंने ब्रजवासियों को नवजीवन दिया।
हर आपत्ति का बुलंद हौसले के साथ
डंटकर सामना किया।
मैंने मन को कभी कमज़ोर नहीं होने दिया।
यही है योग।
मैं योग का संदेश सुनाता हूं,
इसलिए मैं योगेश्वर कहलाता हूं।

मैंने हर परिस्थिति का
सकारात्मक दृष्टिकोण से ही मूल्यांकन किया।
इसलिए मेरे चेहरे पर
नकारात्मकता को कभी झलकने नहीं दिया।
चेहरे पर हंसी की रेखाएं बनाकर
मधुर स्वर में बांसुरी बजाता ही रहा।
बांसुरी के संगीत से
ब्रजवासियों को आह्लादित करता रहा।
संगीत में मानसिक संताप को दूर करने की
अद्भुत शक्ति है।
इसलिए मैंने हमेशा अपने होठों पर
बांसुरी को धारण किया।
मैं संगीत से मन को प्रसन्न करता रहा
और ब्रज वासियों को भी
संगीत का रसास्वाद कराता रहा।
दुःख में भी बंसी को कभी छोड़ा नहीं,
क्योंकि बंसी की ध्वनि
सकारात्मक ऊर्जा प्रदान करती है।
यही है योग।
मैं योग का संदेश सुनाता हूं
इसलिए मैं योगेश्वर कहलाता हूं।

मुझे अपने कर्तव्य को निभाने के लिए
ब्रजभूमि को हमेशा के लिए छोड़ कर
द्वारिका जाना पड़ा।
अपनी प्रिय गोपियों और
प्राणों से भी अति प्रिय राधा का
परित्याग करना पड़ा।
प्रिय पात्र के वियोग को सहना
कोई सामान्य दुःख नहीं।
किंतु मैं प्रसन्न चेहरे के साथ
ब्रज से विदा हुआ।
चेहरे पर मायूसी की रेखाओं को
कहीं भी झलकने नहीं दिया।
यही है योग।
मैं योग का संदेश सुनाता हूं,
इसलिए मैं योगेश्वर कह लाता हूं।

महाभारत के युद्ध के समय
अर्जुन का मन विक्षुब्ध हो उठा।
सुख-दुख, आनंद-विषाद, प्रेम-घृणा
और जय-पराजय के चक्र में फंसे हुए
अर्जुन को मैंने स्थितप्रज्ञ बनने की सलाह
देकर
अपने ही बंधुओं के साथ युद्ध करने के लिए
मानसिक संताप से बाहर निकाला।
मैंने अर्जुन को श्रीमद्भगवद्गीता सुना कर
युद्ध करने के लिए तत्पर बनाया।
मैंने अर्जुन को योग का संदेश सुनाया-
"हे पार्थ! 'समत्वम योग उच्यते'
अर्थात् समंता ही योग है।
जीवन में आने वाली
किसी भी परिस्थिति में
अपने मन की वृत्तियों पर नियंत्रण रखना
और परिस्थितियों को अपने ऊपर
हावी ना होने देना ही योग है।
मन को शांत रखकर
सिर्फ़ अपने कर्तव्य को निभाओ।
चंचल मन को विचलित ना होने दो।
निष्काम भाव से सिर्फ़ अपना कर्तव्य
निभाओ।
फ़ल की अपेक्षा मत रखो।
बस, अपना कर्म और धर्म निभाते जाओ।"
यही है योग।
में योग का संदेश सुनाता हूं,
इसलिए मैं योगेश्वर कह लाता हूं।

आइए! 21, जून 'विश्व योग दिवस' के
पावन पर्व पर साथ मिलकर संकल्प करें:-

"श्री कृष्ण ने दिए हुए योग के संदेश को
मन से विक्षुब्ध लोगों के दिलों में उतारे।
'योग भगाए सारे रोग' के अभियान को
सभी देशों के सहयोग से सफल बनाएं।
'योग अपनाओ जीवन महकाओ' सूत्र को
जन-जन तक पहुंचाकर जागृति फैलाएं।
दुःख, संताप, मनोभार और तनाव को
जीवन से हमेशा के लिए ही दूर भगाएं।
पुण्य प्रताप से मिले इस मानव जीवन को
आनंदमय, मंगलमय और चैतन्यमय बनाएं।
ईश्वरप्रदत्त इस अमूल्य मानव जीवन को
'योगदर्शन' के अमल द्वारा सार्थक बनाएं।"

समीर ललितचंद्र उपाध्याय

बिना राजपाट का राजा

वंदना अरिमर्दन

‘बिना राजपाट का राजा!’
बद्री पर ये कहावत पूरी उतरती थी।
छोटा सा खेत।
छोटा सा घर।
पर चार बेटों और तीन बहुओं का बड़ा परिवार ।
बद्री से पूछे बिना घर का पत्ता न हिलता। तीनों बहुएँ बद्री से पूछे बिना कुछ न करतीं।
छोटी खाना बनाती तो सब्ज़ी बद्री की पसंद की।
मँझली दही बिलोती तो मक्खन की पहली गोली बद्री की।
बड़की गाय का दूध निकालती तो पहली मलाई बद्री की।
ऐसा रुतबा कि धीमी आवाज़ बद्री की कभी न होती।
बद्री खेत में दूर से ही चीखता।और चीख कर ही बात करता।
उस दिन भी बदरी ने खेत की मेड़ ठीक करते करते आवाज़ लगाई..

बदरी - रघू ….अरे ओ रघू …रघू रे …
अरे..छोरा..नेक चिलम तो लगा दे ..कमर अकड़ गयी कसम से ..

बदरी की आवाज़ पर उसका बेटा रघू दूर से ही चीखा-
रघू- अभी लाता हूँ बापू.. अम्मा उपले थाप रही है .. नेक सबर कर लेओ..
vo- बदरी और रघू खेत में काम करते हुए यूँ गला फाड़ कर ही बातें करते थे। बदरी 3 बीघा ज़मीन का एक छोटा किसान।
और रघू इस छोटे किसान का छोटा बेटा।
रघू का बचपन से एक छोटा सा सपना था कि उसकी अपनी एक छोटी सी दुकान हो।ह ह ह ह
जी हाँ ! छोटी सी दुकान।
उसमें आलू पूरी और लद्दू बेचे।
नवाब की तरह उसमें बैठे और गल्ले को बार बार खोले , बंद करे। नोट गिने।
24 बरस का हो गया लेकिन बापू के आगे एक न चली।बदरी रघू को डपटकर कहता -
बदरी - ए माथा ख़राब है गयो है का ?खेत छोड़ बेख़ैती करेगो ? जे बिद्या हम पे न चलेगी …हाँ!

पर बदरी को क्या पता था कि विद्या की ही चलेगी।
जी हाँ ..। रामचरन जब बदरी के पास रघू के लिए रिश्ता लाया तो उससे मना न हो सका।रामचरन ने जैसे राज़ खोलते हुए बदरी को बताया -
रामचरन - अरे बदरी ! हरिपरसाद की बेटी है ! बिदिया ! कालिज पास है। सरकारी स्कूल में मास्टरनी है। शादी में एक स्कूटर देंगे। और साथ ही लड़के के अलावा पिताजी और माताजी को भी सोने की अंगूठी देने की कै रए हैं ..। मैंने तो कै दई … अपना रघू भी हीरा है… चार भइयन में सबसे छोटो है ..लाड़ ते रएगी बिटिया ! अब बता बदरी .. क्या बोलूँ
बिनते (अर्थात् उनसे)
जब ये रिश्ता रघू के लिए आया तो मना करने की किसी की …
हिम्मत न हुई।
बस ..शादी हुई।

मुँह दिखाई पर आने वाली हर महिला को अम्मा वही बात बार बार बताती …

अम्मा(लछमी)-“बिदिया कालिज पढ़ी है ..कालिज…जे समझ लेओ सारे पोथे जाने है …
अंगरेजी अख़बार भी पढ़े है।
भई ! पढ़ी लिखी घर में आवे , घर सम्भाले … अब हम ही थोड़ी न सारी उमर खटेंगे …

और जलन भरी हँसी कमरे में गूँज उठती।अम्मा यानि लछमी के भाग्य पर सब ईर्ष्या से भरी तो बैठीं ही होती थीं।धन्नी मन की जलन छुपा न पाई ।बोली -
धन्नी - अय लछमी ! कहीं तू ही न पैर दबाने लगियो। ह ह ह ह ! साफ़ कहे हैं हम तो !
हाँ भई! पोथी तो ठीक है .. घरदारी भी पढ़ी है कि ना ? हैं? ह ह

औरतें मज़ाक़ उड़ातीं।
सारी औरतें लछमी के रुआब से ख़ुद को अप्रभावित साबित करने की पूरी कोशिश करतीं।
भई पढ़ी लिखी और दान-दहेज वाली बहू का सपना देखना हरेक के बस में तो होता नही है न ।
बदरी का घर।मानो गाँव की पहली ख़बर।

आठ दिन बड़े लाड़चाव में गुज़रे।
फिर आ गए सब अपनी खाल में।
शादी के 10वें दिन ही जब साड़ी छोड़ चूड़ीदार में विद्या चल दी सुबह सुबह स्कूल की ओर , तो गाँव भर में खलबली सी मच गयी ।
सुबह सुबह,भर सवेरे, पूरे रास्ते गाँव वालों की नज़र बहू विद्या पे ।
नए-नए कुँवारे,रघू से जल उठे।
नई पुरानी सब बहुएँ आहें भरने लगीं ।
सारी सासें विद्या में अपनी सत्ता का डाँवाडोलीकरण देखनें लगीं ।

यही हाल स्कूल से आते समय होता । बस! सर तक दुपट्टा । खुला चेहरा । काजल लिप्स्टिक लगाए ।पाँव में पायल और ऊँची ऐड़ी की सेंडिल।
हाथ में कुछ कॉपियाँ॥
कुछ ही दिनो में आलम ये कि विद्या के आते और जाते समय, छतों, कुओं और खेतों पर खड़े लोग मुड़-मुड़कर विद्या को देखते ज़रूर ।

रघू भी अब दोपहर को घर आने लगा ।विद्या और रघू साथ साथ ही खाना खाते । एक ही चारपाई पर।
खुले आँगन में ।
बुजुर्गों के तख़्त हिल जाते ।
अपने ज़माने के लाटबाबू,ताऊ बेनपरसाद अब निरे परम्परावादी हुए जाते हैं ।
ताऊ की, रघू और विद्या पे तो क्या चले ।बद्री को ही पकड़ते। और कहते -

बेनपरसाद- अरे बदरी ! कुछ बड़े बूढ़ों का कोई ध्यान है कि ना? हैं ? अरे ये सहरन की उड़ान गाँवन में न चलेगी … समझा ले अपने बेटा बऊ को । अरे .. बच्चे न बिगड़ेंगे हमारे ?

बदरी से कुछ कहते न बनता । विद्या की दी हुई सोने की अंगूठी मुँह पर ताले का काम करती थी ।
विद्या अपने इस रुआब का पूरा मज़ा लेती ।
गाँव की हर बड़ी खबर विद्या से शुरू और विद्या पर ही ख़त्म होती थी ।
सास ससुर की सोने की अँगूठी और दहेजी स्कूटर सबके मुँह के बोलों को बंद करने का दम रखते थे ।

इधर रघू ने भविष्य के जो सपने देखे थे वो विद्या भी जान चुकी थी ।
एक दिन लोहा गर्म देखते ही विद्या ने शब्दों की चोट की।
विद्या ने रघू से कह ही डाला

विद्या - क्यों जी ? सारी उमर खेती करने का ही इरादा है क्या?
रघू- क्या करें बिदिया ! खेतीहर हैं ..खेती ही करें हैं हम लोग ..
बिदिया- अरे ! हमारा घर परिवार बढ़ेगा तो ख़ाली खेत की कमाई से क्या होगा जी ? तीनो जेठ जी ने तो अपने अपने खेत डाल लिए हैं। हमारा क्या ?
रघू - बापू न मानते बिदिया .. नहीं तो हम भी अपनी दुकान पे बैठते ।सेठ बनके । तू मेरी सिठानी…हैं ?ह ह ह ह
विद्या - तो जी ! इसमें क्या है ?मेरे पापा दो मिनट में करवा देंगे दुकान .. बग़ीची के पीछे, राशन की दुकान के साथ वाली दुकान ख़ाली है ॥
रघू - हैं ?? तूने बात भी कर लई?
विद्या - और क्या जी ! आप से पूछना था बस ! सब पक्का समझो ।
रघू - अरे बापू से भी तो पूछनो होगो..बिनते कौन बात करेगो?
जे बात न बनती बिदिया (उच्छवास)

विद्या - अरे वो मुझ पर छोड़ दो ।बापू तो पियादे हैं .. जीतना तो बड़े सेनापति से है ।
रघू को कुछ समझ न आया । लेकिन विद्या की चतुराई पर पूरा भरोसा था ।
विद्या ने बनाई पूरी और आलू की सब्ज़ी। साथ में रखे चार लद्दू । उसमें रखी एक सोने की अंगूठी ।इस तोप का मुँह सबसे पहले किया ताऊ बेनपरसाद के मुँह पर ।
विद्या आयी । ताऊ जी के पैर छूए और थाली आगे करते हुए बोली -
विद्या- आशीर्वाद दीजिए ताऊजी अपनी इस नादान बेटी को । आपसे सीख कर ही जीवन में आगे बढ़ेंगे हम बच्चे ।भगवान के बाद आपको और पिताजी को ही मैंने जाना है । आप भोग लगाएँ तो हमारा जीवन सफल हो ।

ताऊ जी आँख फाड़ फाड़ कर देखने लगे ।
गाँव की सबसे पढ़ी लिखी लड़की ताऊजी के पैर छूके जाने कौन सी भारीभरकम भाषा मे आशीर्वाद माँगे।भई ताऊजी का रुतबा तो क़ुतुब मीनार बन बैठा ।
कनखियों से अपनी सब बहूबेटियों को ऐसे देखा मानो कह रहे हों-
“देखा ! इसे कहते हैं इज़्ज़त देना ! कुछ सीखो । इतनी पढ़ी लिखी लेकिन घमंड का कोई नाम नहीं !”

ताऊजी ने थाली लेते लेते ही आशीर्वाद दे दिया -
“ख़ूब फलो फूलो । हमारा नाम रौशन करो।”
बदरी और लछमी ताऊ जी के इस आशीर्वाद से ग़ायब थे ।
और जी रघू की खुल गई दुकान ।
पहला फ़्री का गाहक ताऊ को बनाया गया ।
ताऊ जी और चौड़े हो गए।
अब रघू के दहेजी स्कूटर पर दुकान तक की सवारी करती बिदिया ।
और दिल जलते कुवाँरे उम्मीदवारोंके ।
नई पुरानी सब बहुएँ फिर से आहें भरने लगीं ।
और सारी सासें फिर से विद्या में अपनी राजशाही का पतन देखनें लगीं ।

ताऊ जी की किरपा बरसने लगी बिदिया पर ।
चूड़ीदार कब जींस में बदल गया पता न चला।बिना दुपट्टे की ऊँची कुर्ती ने अब रोज़ के परिधान का रूप ले लिया था।
विद्या की दी हुई रिश्वती सोने की अंगूठी ताऊ के मुँह पर भी ताले का काम बख़ूबी करती थी।
विद्या का ज्ञान और ताऊ का बखान ख़ूब चला करता ।

ताऊ जी ने बदरी को फिर पकड़ा -
ताऊ- देख बदरी ! दुकान अपने ही बच्चे की है ।
तू ही तो इस घर का ,इस गिरस्ती का राजा है । तुझे ही दुकान के सामान की देखभाल करनी है ।ध्यान रखना है कि कोई सामान कम न पड़ने पावे।”
लछमी को हिदायत दी गई कि पूरी आलू उसकी देख रेख में बने ।
तीनो जेठानियों को लड्डू बनाने के आदेश दिए

गए। और तीनों भाइयों को ग्राहकों को पटाने का कार्यभार सौंपा गया।
पूरी आलू और लड्डू बनने लगे।
ग्राहक आने लगे।
दुकान चल निकली।

विद्या स्कूल जाती। वहाँ से रघू उसे स्कूटर पर दोपहर में लाता।
लछमी खाना बनाकर देती।
दोनो खाना खाते।
फिर थकी बिदिया सोने चली जाती।
रघू गल्ले पर बैठ जाता।
बिदिया के चर्चे सब तरफ़ होने लगे कि कैसे सारे घर को एक कर दिया।कितनी ऊँचाई पर पहुँचा दिया।
लेकिन ..
लेकिन अब ?
खेत अब उजाड़ सा पड़ा है।
बद्री अब चूल्हे का चौकीदार हो गया है।
आवाज़ का कड़कपन खो चुका है।

सोने की अँगूठी पहने बदरी चूल्हे में लकड़ियाँ झोंकते हुए,अब धीमी और मरियल आवाज़ में बोलता है।-
बदरी(हाँफते हुएऔर चिमनी फूँकते हुए) - रघू ….अरे ओ रघू …रघू रे …(हाँफ)
अरे..छोरा..नेक चिलम तो लगा दे ..कमर अकड़ गयी कसम से .. (हाँफ़)

पर बदरी की आवाज़ पर उसका पास में बैठा बेटा रघू अब भी चीखता ही है।
रघू- ओहो बापू.. अम्मा पूरी बना रही है .. नेक सबर कर लेओ..
जब देखो चिलम चिलम चिलम
गल्ले का काम कितना मुश्किल है .. समझ में आए रह्यो है कि न ..?

बद्री की आँखों में अपना खेत घूमता। खड़ी फसल की ख़ुशबू नाक में उतरती।
लेकिन अब सोने की अंगूठी पहने हाथ में लकड़ी होती और चेहरा चूल्हे में।

सच आज भी बद्री पर ये कहावत पूरी उतरती थी—बिना राजपाट का राजा

तेरा वजूद

मेरी यादों के सिलसिले का--
तेरे होने न होने --का कोई मसला नहीं है--
तू -'---तू -'- -है-- मैं ---मैं--- हूँ
कहाँ कर पायेगा तू मेरा मुकाबला-----
तूने नकारा है- मैंने स्वीकारा है
तू मेरी झोली मे-- मैं तेरी मे बोली मे-'
मेरी उत्कट इच्छा तेरा धर्म संकट
तू बीत राग --मैं भीतरी आग
तेरी उत्तेजित सांसे मेरी घुटती आहे
तू विसर्जन --मैं उत्सर्जन
तुझे दर चाहिए मुझे घर चाहिए
तेरी दिन ब दिन बढ़ती प्यास मेरी बस एक -एक आस
बिला उपजा --मेरा प्यार
तेरा संक्रमित अहसास
तू साहूकार की भरीतिजौरी
मैं मिटटी मे लोटा सोना-
--
तेरी नस मैंने पकड ली है
मगर मैं चुनौती देने नहीं बैठी
तू पठार का एक पत्थर
मैं देवी का समूचा मन्दिर
तू छूट रहा है -मैं बन्ध रही हूँ
तू सपनों का सौदाई मैं उडती नींद का बवंडर
तू जीत- जीत मैं हार-हार
दोनों खतरे के निशान से ऊपर हैं

जब भी याद आती है -माँ!

मैं एक छोटा सा बच्चा बन जाता हूँ

और खुद बखुद पलने मे झ

झूलने लग जाता हूँ

माँ!

तुम अन्धेरे के खिलाफ थी

और मैं धुपप अन्धेरे मे ही लौटता था

पिता का रोष और पत्नी की फटकार झेलते हुए

दरवाजा खोलने की घर मे सबको मनाही थी

लेकिन तुम

रगों मे खून की तरह दौड पडती थी

और मेरी सपनीली आखों मे

फैले आसमान की चमक को बखूबी से पढ़ लेती थी

तुम जानती थी

मुझे गुनगुनी धूप और फाल्गुनी हवा बहुत पसन्द है

तुम्हे यह भी मालूम था

सरसों के पीले खेत

और गेहूं चने की बालिया

मुझे बहुत गुदगुदाती है

मैंने तुम्हे बताया था कि असखय बच्चो की मौत

और उनमे डूबी कवितायें पढ़कर

मैं प्राय उदास हो जाता हूँ

माँ तुम मेरे लिये बहुत जगी

माँ तुम मेरे लिये बहुत खटी

मगर माँ तुम मेरे लिये कभी नहीं थकी

सर्द हवाओं को धूप की तेजी के साथ बांधना

तुमने मुझे सिखाया था

तुम्हारे बोये सफेद फूल

अब पीले पड चुके हैं

मुझे मालूम है माँ!

अब तुम कभी नहीं लौटोगी

बचपन के सारे रंग बिखर गये हैं

पिता मुझमे और मैं पिता मे

माँ तुमको ढूंढ़ताहूँ

हवा की चुप्पी बढ़ गयी है

दिन भी दबे पाँव घर मे घुसता है

उठने-बैठने के तौर तरीके भी बदल गये हैं

समरति की गन्ध लिये

दरवाजे की ओट से

हवा की दस्तक पर

पिताजी अब भी तु महारा नाम पढ़ते हैं

और मनहीं मन सुबकते है

तुम्हारे बिना

मैं भी अभिशप्त---निर् गन्ध

माँ तुम्हे लौटना होगा

मेरी कविताओं मे

मेरी कमजोर पडती रगों मे

अगली पीढी को खुशहाल बनाने के लिये

मिट्टी मे दबे इस बीज को

अंकुरित करने के लिये

तमाम दूँरियां पार करके अपने विश्वास - संबल की गन्ध मे तुम्हे ढूढूगा-

तुम्हारी करूणा भरी रूह को टोह कर - सहला कर

मैं खुद की उडान भर लूँगा

माँ

लेख में व्यक्त विचार लेखक के हैं उनसे संपादक मण्डल या संपर्क भाषा भारती पत्रिका का सहमत होना आवश्यक नहीं है। किसी भी विवाद की स्थिति में न्याय-क्षेत्र नई दिल्ली रहेगा। प्रकाशक : सुधेन्दु ओझा, 97, सुंदर ब्लॉक, शकरपुर, दिल्ली

तृप्ति मिश्रा
9827611723

बन्ने का गीत

हमारे देश में लड़के के विवाह में बन्ने के गीत गाये जाते हैं। यह बड़े आसान से गीत होते हैं। इसमें मुखड़े अलग होते हैं और अंतरे लगभग समान होते हैं।एक ऐसा ही बहुत पुराना बन्ना प्रस्तुत है:-

तेरी पतंग मेरी डोर बनड़ा
तेरी पतंग मेरी डोर बनड़ा

शीश बने के सेहरा सोहे
लड़ियों में नाच रहे मोर बनड़ा
तेरी पतंग मेरी डोर बनड़ा

गले बने के चैनें सोहे
लाकेट में नाच रहे मोर बनड़ा
तेरी पतंग मेरी डोर बनड़ा

कान बने के कुंडल सोहे
मोती में नाच रहे मोर बनड़ा
तेरी पतंग मेरी डोर बनड़ा

कांधे बने के सोहे पीताम्बर
गोटे में नाच रहे मोर बनड़ा
तेरी पतंग मेरी डोर बनड़ा

हाथ बने के चूड़ा सोहे
घड़ियों में नाच रहे मोर बनड़ा
तेरी पतंग मेरी डोर बनड़ा

संग बने के बनड़ी सोहे
मंडप में नाच रहे मोर बनड़ा
तेरी पतंग मेरी डोर बनड़ा

तेरी पतंग मेरी डोर बनड़ा

स्त्री संवेदना

संज-संवरकर रोज वह
दरवाजे की ओट में खड़ी
टकटकी लगाए निहारती
जैसे किसी बेहद करीब
अपने के इंतजार में हो
जब वह थक जाती
कोमल भाव मुरझाते
पलकों से आंसू टपकते
सुनहरे केशुओं में वह
अपनी अंगूलियां फिराए
दुखी मन से कुछ सोचती
वह भाव चेहरे पर उकेरा
स्त्री संवेदना हर कोई
बिन प्रेम कैसे समझ पाए

सूर्यदीप कुशवाहा

रसना की रासलीला

रसना जो रासलीला रचावै
तो तन तड़प जावै।
रसना जो रासलीला रचावै
तो मनमुटाव हो जावै।।

रसना जो रासलीला रचावै
तो दिलजला हो जावै।
रसना जो रासलीला रचावै
तो जिवहिंसा हो जावै।।

रसना जो रासलीला रचावै
तो अटूट गांठ पड़ जावै।
रसना जो रासलीला रचावै
तो चैन की नींद खो जावै।।

रसना जो रासलीला रचावै
तो महाभारत हो जावै।
रसना जो रासलीला रचावै
तो घर मरघट हो जावै।।

रसना जो रासलीला रचावै
तो रंग में भंग हो जावै।
रसना जो रासलीला रचावै
तो उथल-पुथल मच जावै।।

रसना जो रासलीला रचावै
तो रब भी रूठ जावै।
रसना जो रासलीला रचावै
तो जिंदगी ठहर जावै।।

लेकिन रसना जो सूर में सूर मिलावै
तो जीवन सफल हो जावै।।

समीर उपाध्याय

1. दृष्टि औ' चेतना

सब कुछ वही है
बदला कुछ भी नहीं,
धरती अपनी रफ्तार में घूम रही है।
घड़ी भी अपने हिसाब से चल रही है।
दिन रात भी खुद - बखुद
हो ही जाते हैं।
गेहूं, धान की बुआई-कटाई भी
हो जाती है।
भारत का लोकतंत्र भी वही है,
जब से मैं देख रहा हूँ।
फिर, कुछ बदले भी क्यों?
मेरी दृष्टि ही कितनी पुरानी है
इक्कीस साल की।
और चेतना दस- पंद्रह साल की।

2. बचपन

कहीं पर बेबसी, कहीं लाचारी
बिखरी पड़ी है कहीं बरबादी,
देखकर मासूमों की भूख
शब्द शून्य हो जाते हैं अधर।
आती है छोटी-छोटी उम्र
या कहो छोटी सी पूरी जिंदगी,
तुम्हारी जूठी प्लेटें टटोलने,
अमीरों की बारात में।
कॉलेज, ऑफिस या फिर
काम पर जाते वक्त,
छोटे-छोटे हाथ शायद
दो या अढाई इंच के,
रोक देते हैं हमारे बड़े-बड़े कदम।
उन चंद सिक्कों की
खनखनाहट में वे,
अपना बचपन
महसूस करना चाहते हैं,
जिन्हें हम घर पहुँचकर
आलमारी या टेबल पर
रख देते हैं,
बटुए का बोझ हल्का करने के लिए।

रवि कान्त उपाध्याय

व्यग्र पाण्डेय

साहब मैं मज़दूर हूँ

साहब मैं मज़दूर हूँ
मैं मज़दूर हूँ, मैं मजबूर हूँ।

शहर के शहर बनाता हूँ मैं
मगर दुनिया के किसी कोने में
अपना आशियाना नहीं बना पाता हूँ
क्योंकि
साहब मैं मज़दूर हूँ
मैं मज़दूर हूँ, मैं मजबूर हूँ।

दुनिया में सभी का सम्मान है
आदर और सत्कार है
बस पता नहीं क्यों उस सम्मान
का स्थान बनाने वालों को ही
सम्मान नहीं दिला पाता हूँ
क्योंकि शायद मैं ही भूल गया कि
साहब
मैं मज़दूर हूँ, मैं मजबूर हूँ।

श्रम दिवस पर श्रम का सम्मान कर
मान ली हमने अपने कर्तव्यों
से इतिश्री
आगे पूरे वर्ष वही मानसिक टूटन
ग़रीबी और भुखमरी में
जीने को विवश हूँ
क्योंकि शायद मैं ही भूल गया कि
साहब
मैं मज़दूर हूँ, मैं मजबूर हूँ।
मैं मज़दूर हूँ, मैं मजबूर हूँ।

"नहीं पुकारुंगीं"

सोच कर उठी
अब नहीं पुकारुंगीं
मैं कभी तुम्हारा नाम
जब भी पुकारती हूँ
खामोशी में तुमको
लौट कर मेरी आवाज़
मुझ तक ही
वापस चली जाती है

शायद तुम तक
पहुंच नहीं पाती होगी
पर मुझे ऐसा लगता है
तुम मेरी आवाज़ सुनकर भी
अनसुना तो नहीं कर देते
या फिर सुनकर
चुप तो नहीं रह जाते

कभी सोच में पड जाती हूँ
यह सोच कर तुम
चुप तो नहीं रह जाते
मैं तुमको पुकारुं
और पुकारुं
ज़रा जोर से पुकारुं
बस देती रहूं मैं आवाज़

और तुम बैठे
क्षितिज के उस पार समाधिस्थ हो
मेरी आवाज़ सुनते रहो
मन मे यह लालसा लिये
मैं पुकारती रहूँ
और तुम मेरी आवाज
चुपचाप सुना करो...!

डॉ.विभा रजंन (कनक)
B/37 ग्राउंड फ्लोर, स्वामी नगर, नयी दिल्ली-110017
9911809003